ॐ

आचार्य श्री भ्रातृचन्द्रसूरि ग्रन्थमाळा

श्रीनेमिचन्द्र सैद्धान्तिक कृत

षड्द्रव्य संग्रह.

मूळ तथा शुद्ध गुजराती भाषान्तर सहित.

मूलना बालबोध कर्ता,

पार्श्वचन्द्रगच्छीय पंडित श्री रामचन्द्रमुनि.

प्रकाशन--प्रेरक,

मुनि श्री कनकचन्द्रजी.

प्रकाशक,

जैन हठिसींग सरस्वती सभा तरफथी

शाह गोकळदास मंगळदास.

शामळानी पोळ--अमदावाद.

मूळना बाळबोध उपरथी शुद्ध गुजरातीमां

भाषान्तर कर्ता,

शास्त्री गिरिजाशंकर मयाशंकर म्हेता.

मांडवीनी पोळ--अमदावाद.

बिकानेरनिवासी श्रावक तरफथी

भेट.

विक्रम सं० १९८६.

"ઉત્કૃષ્ટ મુદ્રણાલય"
મુદ્રકઃ પુરૂષોત્તમદાસ શંકરદાસ
રીચીરોડ પુલ પાસે, ઢીંકવા વાડી,
અમદાવાદ.

ॐ

आचार्य श्री भ्रातृचन्द्रसूरि ग्रन्थमाळा (२९)

श्रीनेमिचन्द्र सैद्धान्तिक कृत

षड्द्रव्य संग्रह.

मूळ तथा शुद्ध गुजराती भाषान्तर सहित.

मूलना बालबोध कर्ता,

पार्श्वचन्द्रगच्छीय पंडित श्री रामचन्द्रमुनि.

प्रकाशन-प्रेरक,

मुनि श्री कनकचन्द्रजी.

प्रकाशक,

श्री जैन हठिसींग सरस्वती सभा तरफथी

शाह गोकळदास मंगळदास.

शामळानी पोळ—अमदावाद.

मूळना बाळबोध उपरथी शुद्ध गुजरातीमां

भाषान्तर कर्ता,

शास्त्री गिरिजाशंकर मयाशंकर म्हेता.

मांडवीनी पोळ—अमदावाद.

बिकानेरनिवासी श्रावक तरफथी

भेट.

विक्रम सं० १९८६

॥ श्रीभ्रातृचन्द्रसूरिषट्पदी ॥

"ब्रह्मराज आज साँयरो बंसी बजा गयो" इत्यनेन रागेण गीयते॥

श्रीभ्रातृचन्द्रसूरिराजमर्थदायकं ।
भजस्व हे सखे गुरुं विरागिनायकम् ॥ टेर ॥
संसारमेतमुज्झितुं समीहसे यदा ।
मुक्तिं च यातुमिच्छसि प्रमोदतस्तदा श्रीभ्रातृचंद्र ।१
प्रवेशमीहसे यदा धियो निवेशने ।
तदा मनः प्रसारयेर्ममोपदेशने ॥ श्रीभ्रातृचंद्र ॥२॥
करालकाल एष संनिधौ समागतः ।
किमीक्षसे विनश्वरं फलं हि रागतः ॥श्रीभ्रातृचंद्र।३॥
विहाय कर्म शास्त्रमर्म धर्मकर्मणे ।
ग्रहीतुमीहसे यदा तदा सुशर्मणे ॥श्रीभ्रातृचंद्र॥४॥
श्री पार्श्वचन्द्रसूरिराजवंशदीपकं ।
सुमुक्तिराजधानिकाध्वनः [1]समीपकम् ।श्रीभ्रातृ० ॥५
तपःप्रकर्षनिर्जितोरुपञ्चसायकं ।
महानिदेशनासुधारसप्रपायकम् ॥श्रीभ्रातृचंद्र ॥६॥
नित्यानन्देन रचिता भाईलालेन गापिता ।
आचार्यभ्रातृचन्द्रस्य षट्पद्यास्तां मुखाम्बुजे ॥ १ ॥

---

१ समीपयतीति समीपकस्तं-मुक्तिराजधान्याः सामीप्यदर्शकम् .



श्रीमन्नागपुरीयबृहत्तपागच्छाधिराजश्रीभ्रातृचन्द्रसूरिसद्गुरुभ्यो नमः ॥

ॐ

निवेदन.

मुमुक्षु वाचक ! आ संसार अरघट्ट, अनाद्यनंत होइ तत्पतित सर्व जीवात्माने दुर्निष्क्रम जो के अवश्य जणाय छे पण ते विषमातिविषम विलक्षण अरघट्टमांथी अनेकानेक आत्माओ छटकी-सरीने स्वाभीष्ट सुखनिधान स्थाने बीराजी रह्या छे. तेओ ए सर्वोत्कृष्ट स्थानना परमातिपरम सुखास्वादनो जे अनुभव अद्यापि करे छे, लोकशिखरे स्थिति करी अनिर्वचनीय परमानंदने जे संपूर्ण भोगवे छे अने केवळ स्वानुभवगम्य-अवाच्य लोकोत्तर संतोषने जे संपादन करे छे-ते सर्वनुं मूळ, ते महान आत्माओनी सर्वाभिनंद्य अने विश्ववंद्य धर्मानुष्ठान-तत्परता-धर्मनी अने पोतानी वास्तविक ओतप्रोतता एज छे: नहि के 'धर्म, धर्म' ए प्रकारनी उपलक-वाङ्मात्र जल्पना !

आपणे जो सत्यतापूर्ण मुमुक्षु होइए, ते जगत्पूज्य सिद्धात्माओना निष्पक्षपाती अनुयायीओ होइए अने तत्कथित सर्व सिद्धांतोना अटल पूजारी होइए तो निःशंक आपणी पण तेज स्थिति-तेज लोकोत्तर स्थाननी योग्यता केम न संभवे ? तेवी अलौकिक योग्यता संपादन करवा ते पुण्यात्माओनी अलौकिक प्रगतिने आपणे अनुसरवुं जोइशे, तेमणे रचेलां सूत्रो-वृत्तिओ-भाष्योनो आपणे पूर्ण अभ्यास करवो जोइशे अने

ते अभ्यासद्वारा प्राप्त थयेलुं ज्ञान मनसा–वचसा–कर्मणा आपणा बाह्य–आभ्यन्तर आचारोमां उतारवुं जोइशे. आपणे आपणा आध्यात्मिक मार्गमां विशेष प्रगति करवा जो तैयार थइए तो आपणी सामे ते पूज्य पवित्रात्माओए एटलां बधां मोटां साधनो खडां करी मूक्यां छे के जे द्वारा परम उत्कृष्ट ज्ञान प्राप्त करीए अने ते द्वारा ज्ञाननिष्ठनी उच्च कक्षामां जइ पहोंची शकीए.

कदाच कोइ कहे के आधुनिक अति अल्प बलवाळा जीवो, ते ते अतिविस्तृत सूत्रो–वृत्तिओ–चूर्णिओ–भाष्योनुं परम दुरवगाह सूक्ष्म रहस्य समजवा घणाज असमर्थ होइ ते ते ज्ञानीकथित सिद्धांतोनुं अध्ययन करवा अल्प संख्यामांज बहार आवे छे अने बीजा केटलाक अतिशय निर्बळ जीवो, ते ते सिद्धांतग्रंथोनो अभ्यास करवा आंतरिक उत्कट इच्छा-वाळा होय छे छतां ते ते ग्रंथोनी विषमता जोइ नासीपास थाय छे तेनुं केम? आ कथननो उत्तर अतिसरल छे. ते ते सैद्धांतिक ग्रंथो भले कदाच दुरवगाह होय तो पण ते ते ग्रंथोमां रहेलुं दिव्य ज्ञान आपणा पूर्वाचार्योए बीजा नाना ग्रंथोमां सरलता अने सुगमतापूर्वक आपणी समक्ष उतारी आपेलुं छे, जेनो आ एकज नमुनो जुओ–' श्री नेमिचन्द्र सैद्धान्तिककृत षड्द्रव्यसंग्रह.' आ अपूर्व ग्रंथ, जैन दर्शनना मुख्य सिद्धांतने खरेखर सरळता अने सुगमता पूर्वक सम-जावे छे. तेमां पण ते ग्रन्थ उपर श्री पार्श्वचंन्द्रगच्छीय श्री

रामचन्द्र मुनीश्वरे बाल जीवोना उपकारार्थे सुंदर बालबोध लखी घणोज उपकार कर्यो छे अने जैनधर्मना अनुपम सिद्धांतनुं प्रकटीकरण करी अभ्यासी मुमुक्षुने मार्गदृष्टानुं काम करी बताव्युं छे. आ ग्रन्थ उपर बालबोधकार श्री रामचंद्र मुनि, 'षड्द्रव्यसंग्रह' ग्रन्थनो अभ्यास करवा भलामण करता आ प्रमाणे लखे छेः—

"न वेत्ति द्रव्याणि जिनोदितानि
स नैव जैनः खलु मूढचेतनः ॥
तं द्रव्यबोधाय पठंतु सादराः
श्री नेमिचन्द्रोदितद्रव्यसंग्रहम् ॥१॥

जे मनुष्य जिन भगवाने कहेला जीव–अजीवादि द्रव्योने जाणतो नथी ते जैनज नथी. केमके ते मूढचेतन छे– जीव–अजीवादि द्रव्यो समजवामां मूढ छे–अज्ञान छे; माटे जीवादि द्रव्योनुं ज्ञान जो करवुं होय तो श्री नेमिचंद्रकृत द्रव्यसंग्रहनो खंतथी अभ्यास करवो जोइए."

द्रव्यसंग्रह ग्रंथना मूळ कर्ता श्री नेमिचन्द्र सैद्धान्तिक, क्यारे कया प्रदेशमां थया ते कंइ मळी शकतुं नथी पण द्रव्यसंग्रह उपर बाळबोध करी महान उपकार करनार मुनि श्री रामचंद्रनो समय तो तेमणेज आ ग्रंथना आदि–अंतमां आपेला आ लखाण उपरथी सहेज समजी शकाय छे. जेमकेः—

"श्री पार्श्वचन्द्रसूरिप्रवर्तितगच्छीयोपाध्याय-
श्रीहीरानंदचन्द्रगुरुचरणयुगलं प्रणतिविषयीकृत्य-
बालानामुपकाराय रामचन्द्रेण भाषया ॥
द्रव्यसंग्रहशास्त्रस्य व्याख्यालेशो वितन्यते ॥१॥

श्री पार्श्वचन्द्रसूरिए प्रवर्तावेला गच्छना उपाध्याय श्री हीरानंदचंद्र गुरुना चरणमां प्रणाम करी हुं रामचन्द्र, बाल जीवोना उपकारार्थे भाषामां—बालबोधमां द्रव्यसंग्रह शास्त्रनी अल्प व्याख्या—नानुं विवरण रचुं छुं."

वळी छेवटे ग्रन्थनी अंते पण आ प्रमाणे श्लोक तेमणे पोतेज आपेलो छे:—

शब्दन्यायागमादिश्रुतसदवगमापां निधीनां गुरूणां
हीरानन्देन्दुनाम्नां चरणयुगलयोः सेवया सिद्धबोधः।
धर्मार्थी रामचन्द्रो मृदुलतराधियां हेतवे बालबोधं।
द्रव्यादेः संग्रहस्य व्यलिखदबहुकं तस्य टीकां विलोक्य
॥ १ ॥

'मारा गुरु—नामे श्री उपाध्याय हीरानन्द चन्द्र, व्याकरण शास्त्र, न्यायशास्त्र तथा आगमशास्त्र संबंधी उत्तम ज्ञानना समुद्र समान हता अने तेमना चरणयुगलनी सेवाथी मने सर्व प्रकारनुं ज्ञान सिद्ध थयुं छे. धर्मनी इच्छावाळा में—रामचन्द्रे, अति मृदु बुद्धिवाळा—बाळ जीवोने ज्ञान प्राप्त थाय ते माटे

द्रव्य संग्रह ग्रन्थनो आ बालबोध, ते ग्रन्थनी टीका जोइ-विचारीने संक्षेपमां लख्यो छे." ग्रन्थनी आदि-अंतमां आपेला तेमना आ लखाणथी सिद्धज थाय छे के, मुनिश्री रामचन्द्र, श्री पार्श्वचन्द्रसूरिप्रवर्तित 'पायचन्द' गच्छना हता अने तेमनो स्थितिकाळ श्री पार्श्वचन्द्रसूरिना स्थितिकाळनो उत्तर काळज लगभग गणाय. तेमणे लखेला बालबोध उपरथी जणाय छे के, तेओनी विद्वत्ता तथा आगमज्ञानीता अपूर्व हती. द्रव्यसंग्रहना मूळ आशयने बराबर लक्ष्यमां लइ दरेक गाथाओ उपर तेमणे सारो प्रकाश पाडयो छे अने आ उत्तम ग्रन्थ तेमना बालबोधथी ज उत्तमोत्तम बनी शक्यो छे. आवा आवा ग्रंथो खरेखर अति अल्प मतिवाळा हरकोइने सिद्धांतना मार्गदर्शक बने तेमां कंइ आश्चर्य नथीज.

मुनिश्री रामचन्द्रकृत बालबोधसहित आ षड्द्रव्यसंग्रह ग्रन्थनी एक प्रत तथा चोपडो, अमदावाद-शामळानी पोळ-पायचंद गच्छना-उपाश्रय ज्ञानभंडारमांथी भ्रातृचन्द्रसूरीश्वरना शिष्यप्रवर महाराजश्री जगत्चंद्रजी महाराजना प्रशिष्य मुनिश्री कनकचन्द्रजीए शोधी काढयो अने पछी तेमनी प्रेरणाथीज सामान्य सर्व गुर्जर प्रजाने स्पष्ट गुजरातीमां आ ग्रन्थनुं ज्ञान मळी शके ते माटे तेमणे आ ग्रन्थना बालबोधनुं शुद्ध गुजराती भाषांतर करी आपवानुं काम मने सोंपवामां आव्युं. में आ ग्रन्थना बालबोधने शुद्ध गुजरातीमां लख्यो छे पण बालबोधकर्ताना मूळ आशयने जाळवी राखवा खास लक्ष्य आप्युं

छे तेमज भाषादृष्टिए कोमळता तथा सरळता करवा पूरतो प्रयत्न करेलो छे.

आ षड्द्रव्यसंग्रह ग्रंथ, मूळरूपे तथा शुद्ध भाषांतररूपे जे आजे प्रकट थाय छे तेमां प्रेरक मुनिश्री कनकचन्द्रजी छे तथा ग्रन्थ प्रकट करवा गृहस्थोने उपदेशदाता साध्वीजी खान्तिश्रीजी छे. साध्वीजी श्री खान्तिश्रीना उपदेशप्रभावथी बीकानेर निवासी जे उदार गृहस्थो आ उत्तम ग्रन्थना प्रकटन कार्यमां द्रव्यदान करी सहायक थया छे तेओनी नामावली आ प्रमाणे छेः—

रु २०० उदयचन्द्रजी रामपुरीआनी धर्मपत्नी रुपांबाइ.
रु १०० शाह चतुर्भुजजी दफतरी.
रु ५० शाह भीमराजजी रामपुरीआ.
रु ५० शाह कनैयालाल गोलेचानी माता.
रु ५० शाह बदनमल बांठीआनी धर्मपत्नी सोनबाइ.

आ रीते सदगृहस्थोनी सहायथी आ ग्रन्थ भाषांतर साथे प्रकट थवा पाम्यो छे, जेनुं पुण्यफळ ए गृहस्थोने छे.

वळी आ ग्रन्थनुं शुद्ध गुजराती भाषांतर बालबोधने अनुसरतुंज छे, तो पण प्रेसना के मारा पोताना दृष्टिदोषथी ज्यां ज्यां भूलो जोवामां आवी छे तेनुं शुद्धिपत्र आपेलुं छे; ते जोइनेज ग्रन्थ वांचवो योग्य छे. जो के ग्रन्थ कदमां नानो छे तो पण तेनी गंभीरता तथा उपयोगीता कोइ महान ग्रन्थनीज

तुलना करे छे अने तेथीज तेनुं पूर्ण रहस्य जे साधारण अभ्यासी हशे तेनेज विशेष समजाय तेवुं छे. व्यवहार नय तथा निश्चयनयनी दृष्टिए जेवुं षड्द्रव्यनुं स्वरूप विशेष स्पष्ट रूपे आ ग्रन्थमां आपवामां आव्युं छे तेवुं अन्यस्थळे अमुक कोइ कोइ ग्रन्थो विना भाग्येज मळशे, जे वांचवाथी समजाशे. अस्तु.

अंतिम एज प्रार्थना के, ग्रन्थकर्ता तथा बालबोध-कर्ता तो विद्वानज होवाथी तेमना संबंधे तो कंइ कहेवानुं नथीज, पण मारा जेवा अभ्यासीनी कक्षामां रहेलानो प्रमाद-भूल संभवित होवाथी भाषांतरमां के मूळमां जे जे दोषस्थळो जोवामां आवे तेने तेने विद्वानो कृपापूर्ण हृदये सुधारी लेवा प्रयत्न करे.

ले० विद्वानोनो ऋणी:--

षड्द्रव्यसंग्रह-बालबोध उपरथी अनुवादक,

शास्त्री गिरिजाशंकर मयाशंकर म्हेता.

मांडवीनी पोळ, अमदावाद.

विषयानुक्रमणिका.

अध्याय १ लो.

अध्याय २ जो.

अध्याय ३ जो.

ॐ

श्री नेमिचन्द्र सैद्धान्तिककृत

-षड्द्रव्यसंग्रह-

નું

શુદ્ધ ગુજરાતી ભાષાંતર.

મંગલાચરણ.

सूत्र—(गाथा)

जीवमजीवं दव्वं जिणवरवसहेण जेण णिद्दिट्ठं ॥
देविंदविंदवंदं वंदे तं सव्वदा सिरसा ॥ १ ॥

अर्थः—गणधरादि जिनोमां-केवली भगवानोमां, जेओ सर्व-श्रेष्ठ छे; जेमणे, चेतनालक्षण जीवद्रव्य तथा अचेतनालक्षण धर्म—अधर्म—काळ—आकाश—पुद्गल—ए पांच प्रकारनुं अजीव-द्रव्य दर्शाव्युं छे—कह्युं छे अने जेमने ६४ देवेन्द्रो नित्य वंदन करे छे, ते श्री तीर्थंकर देवने नम्र मस्तके हुं सर्वदा वंदु छुं—नमुं छुं. १

जीवद्रव्यस्वरूपकथन.

सूत्र—(गाथा)

जीवो उवओगमओ अमुत्ती कत्ता सदेहपरिमाणो॥
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्ससोड्ढगई ॥ २॥

अर्थः—जीव—आत्मा उपयोगमय छे—अर्थात् ज्ञानोपयोगमय अने दर्शनोपयोगमय छे; सारांश के आत्मा निश्चय नयनी अपेक्षाए शुद्ध ज्ञान—दर्शनोपयोगमय छे अने व्यवहारनी अपेक्षाए क्षायोपशमिक ज्ञानोपयोगमय तथा दर्शनोपयोगमय छे. वळी आत्मा अमूर्त छे—मूर्तिमान नथी; जो के, व्यवहारनी अपेक्षाए जीव कर्माधीन होइ मूर्तिमान छे पण निश्चयनी अपेक्षाए जीव अमूर्तज छे. वळी जीव कर्ता छे; जो के, निश्चयदृष्टिए आत्मा द्रव्य—कर्म—भावादिनो कर्ता नथीज पण व्यवहारदृष्टिए तेमां कर्तृत्व छे. आत्मा स्वदेहपरिमाण छे; एटले पोताना शरीर जेवडा प्रमाणनो छे; जो के निश्चय अपेक्षाए आत्मा लोकाकाशव्यापी छे तोपण व्यवहारदृष्टिए ते स्वदेहप्रमाण छे. आत्मा सुखदुःखादिनो भोक्ता छे—कर्मजन्य सुखदुःखने भोगवे छे; ते पण व्यवहारदृष्टिए ज. निश्चयदृष्टिए तो आत्मा सहजसुखामृतनोज भोक्ता छे. वळी आत्मा संसारस्थ छे—एटले के, व्यवहारथी द्रव्य—क्षेत्र—काळ—भव—भाव ए पंचप्रकार—पुद्गलपरावर्तलक्षण संसारमां स्थिति करनारो छे, पण

निश्चयथी तो आत्मा सिद्ध छे. जो के व्यवहारदृष्टिए राग-द्वेषनां परिणामवशात् असिद्ध छे; पण निश्चयदृष्टिए तो ते सिद्ध छे. तेमज आत्मा विश्वनी उपर गति करनारो छे-ऊर्ध्व गतिमान छे. जो के व्यवहारथी कर्मसंबंधने लीधे उंच-नीच-तिरछी गति करे छे; पण निश्चय अपेक्षाए तेम नथी. २

आ बीजी गाथामां जीवद्रव्यनुं नव प्रकारे व्याख्यान सामान्यरूपे जणाव्युं छे; तेज नवप्रकारनुं विशेष व्याख्यान हवे पछीनी बार गाथाओथी करे छे:—

सूत्र—(गाथा)

तिक्काले चउपाणा इंदियबलमाउ आणपाणो य ॥
ववहारा सो जीवो णिच्छयणयदो दु चेयणा जस्स ॥३॥

(आ गाथामां जीव शब्दनो अर्थ विस्तारथी दर्शाव्यो छे)

अर्थः—भूत, भविष्य ने वर्तमान ए त्रणे काळमां प्राण चार छे. पहेलो इन्द्रियप्राण, बीजो बलप्राण, त्रीजो श्वासोच्छ्वास प्राण अने चोथो आयुःप्राण छे. अर्थात् शुद्ध चेतनारूप निश्चयप्राणथी विपरीत एवो जे अशुद्ध चेतनारूप प्राण ते इन्द्रियप्राण छे; अनंतवीर्यरूप निश्चयप्राणथी विपरीत एवो जे मनोबल-वचनबल-कायबलरूप प्राण ते बलप्राण छे; अनादि अनंत आत्मद्रव्यनी सत्तारूप निश्चयप्राणथी विपरीत सादिसांतरूप जे प्राण ते आयुःप्राण छे अने अनंतसुखरूप निश्चयप्राणथी विपरीत जे अल्पमात्र खेदनिवृत्तिरूप प्राण छे ते

श्वासोच्छ्वास प्राण कहेवाय छे. आ चार व्यवहार प्राणना उत्तर भेद १० छे. जेमके:—इन्द्रिय प्राणना पांच भेद छे, बलप्राणना त्रण भेद छे, आयुःप्राण एक छे अने श्वासोच्छ्वास प्राण पण एक छे. एम एकंदर दश प्राण प्रसिद्ध छे. आ प्राणोने व्यवहार नयनी अपेक्षाए भूत, भविष्य तथा वर्तमान काळमां जे धारण करे छे तेने जीव कहेवामां आवे छे; निश्चय नयनी अपेक्षाए शुद्ध चेतनारूप निश्चयप्राणने जे धारण करे छे ते जीव कहेवाय छे. ३

उपरनी गाथामां जीवाधिकार कह्यो, हवे उपयोगाधिकार कहेवाय छेः—

सूत्र--(गाथा)

उवओगो दुवियप्पो दंसणणाणं च दंसणं चउधा॥
चक्खु–अक्खु–ओही–दंसणमथ केवलं णेयं ॥४॥

अर्थः---उपयोग बे प्रकारनो छे; एक दर्शनोपयोग अने बीजो ज्ञानोपयोग. तेमां दर्शनोपयोग चार प्रकारनो छे; एक चक्षुर्दर्शनोपयोग, बीजो अचक्षुर्दर्शनोपयोग, त्रीजो अवधिदर्शनोपयोग अने चोथो केवल दर्शनोपयोग जाणवो. आ चार प्रकारना दर्शनोपयोगनुं स्पष्टीकरण आ प्रमाणे छेः— नेत्रद्वारा जे दर्शन–ज्ञान ते चक्षुर्दर्शनोपयोग छे, नेत्र सिवायनी बीजी चार इन्द्रियोद्वारा जे ज्ञान ते अचक्षुर्दर्शनोपयोग छे अने अवधिदर्शनावरणना क्षयोपशमथी अवधि–मर्यादा-

प्रमाणमां जे दर्शन–ज्ञान ते अवधिदर्शनोपयोग छे. आ त्रण दर्शनोपयोगोने क्षायोपशमिक दर्शनोपयोग कहेवामां आवे छे. जे लोकालोक पदार्थनुं दर्शन–ज्ञान ते चोथो केवल दर्शनोपयोग छे. आ चोथा दर्शनोपयोगने क्षायिक दर्शनोपयोग कहेवामां आवे छे. ४

उपयोगना बे प्रकारपैकी दर्शनोपयोगनुं स्वरूप कह्युं; हवे ज्ञानोपयोगनुं स्वरूप कहे छेः—

सूत्र--(गाथा)

णाणं अट्ठवियप्पं मदिसुदओहीअणाणणाणाणि॥
मणपज्जवकेवलमवि पच्चक्खपरोक्खभेयं च ॥५॥

अर्थः—ज्ञानना (ज्ञानोपयोगना) आठ भेद छे. मति अज्ञान, श्रुतअज्ञान, विभंगज्ञान, मतिज्ञान, श्रुतज्ञान, अवधिज्ञान, मनःपर्ययज्ञान तथा केवळज्ञान–एम आठ भेद छे. आ आठ प्रकारनां ज्ञानपैकी केटलांक प्रत्यक्ष छे अने केटलांक अप्रत्यक्ष छे; एटले के मतिअज्ञान, श्रुतअज्ञान, मतिज्ञान तथा श्रुतज्ञान–ए चार परोक्ष कहेवाय छे. जो के नेत्रादि इन्द्रियोद्वारा उत्पन्न थनारुं मतिज्ञान व्यवहार दृष्टिए प्रत्यक्ष छे तो पण निश्चय दृष्टिए ते परोक्षज छे. विभंगज्ञान, अवधिज्ञान तथा मनःपर्ययज्ञान–ए त्रण ज्ञान एकदेश प्रत्यक्ष कहेवाय छे अने केवळज्ञान संपूर्ण प्रत्यक्ष कहेवाय छे. आ आठ भेद पैकी त्रण अज्ञान तथा चार ज्ञान ते क्षायोपशमिक छे अने केवळज्ञान

क्षायिक छे. तेमज त्रण अज्ञान ते मिथ्यादृष्टिने उत्पन्न थाय छे अने बाकीनां सर्व ज्ञान सम्यग्दृष्टिने उत्पन्न थाय छे. ५

सूत्र—(गाथा)

अट्ठचउणाणदंसणसामण्णं जीवलख्कणं भणियं ॥
ववहारा सुद्धणया सुद्धं पुण दंसणं णाणं ॥६॥

अर्थः—एरीते व्यवहारदृष्टिए जीवनुं सामान्य लक्षण कहेवामां आव्युं के जीव—आत्मद्रव्य, पूर्वोक्त आठ ज्ञानमय छे—अर्थात् व्यवहार नयनी अपेक्षाए आत्मा, आठ प्रकारनां ज्ञानमय तथा चार प्रकारनां दर्शनमय छे. पण शुद्ध नय एटले निश्चय नयनी अपेक्षाए आत्मा शुद्ध दर्शन—केवल दर्शन, शुद्ध ज्ञान—केवल ज्ञानमय छे. ६

'आत्मा उपयोगमय छे' ए वात कही; हवे आत्मानुं अमूर्तपणुं समजावे छेः—

सूत्र—(गाथा)

वन्नरसपंचगंधा दो फासा अट्ठ णिच्छया जीवे ॥
णो संति अमुत्ति तदो ववहारा मुत्ति बंधादो ॥७॥

अर्थः—धोळो—पीळो-लीलो—लाल—काळो-ए पांच वर्ण-रंग; तीखो—कडवो—तुरो—खाटो—मीठो—ए पांच रस; सुगंध अने दुर्गंध—ए बे गंध तथा उष्ण—शीतळ—सुकुमार—कर्कश—चिक्कण—रूक्ष—गुरु(भारे)—लघु(हलको)—ए आठ स्पर्शः—आ वीस गुणो सहित जे पदार्थ ते मूर्त कहेवाय छे—पौद्गलिक

छे. आ वीस गुणो, निश्चयनयनी अपेक्षाए जीवमां आत्मद्रव्यमां नथी माटे ते अमूर्त छे. व्यवहार नयनी अपेक्षाए अनादि एवां आठ प्रकारनां कर्मोना बंधथी आत्मा–जीव, जो के मूर्त छे; (पण निश्चयदृष्टिए अमूर्त ज छे.) ७

हवे आत्मा, निश्चय नयनी अपेक्षाए–पुद्गल कर्मनो कर्ता नथी पण व्ययहारनये राग–द्वेष–मोहरूप विभाव परिणामने वश थई कर्मनो कर्ता छे, एवा आशयथी कहे छेः–

सूत्र—(गाथा)

पुग्गलकम्मादीणं कत्ता ववहारदो दु णिच्छयदो ॥
चेदणकम्मा णादा सुद्धणया सुद्धभावाणं ॥ ८ ॥

अर्थः–आत्मा, व्यवहार नयनी अपेक्षाए ज्ञानावरण वगेरे आठ पुदगल कर्मोनो, (तेमज 'आदि' शब्दथी) औदारिक–वैक्रिय–आहारकरूप नोकर्मनो तथा घटपटादि बाह्यवस्तुनो कर्ता छे; पण निश्चय नयनी अपेक्षाए आत्मा, चेतनकर्मा छे–अर्थात् अशुद्ध निश्चयनी दृष्टिए आत्मा,कर्मसंबंधथी उत्पन्न थनार राग-द्वेष–मोहादि अशुद्ध चेतनारूप भावकर्मोनो कर्त्ता छे अने शुद्ध निश्चयनी दृष्टिए आत्मा अनंत ज्ञान–सुखादि शुद्ध चेतनारूप शुद्ध भावोनो कर्ता छे. (आ गाथानुं अंतिम रहस्य ए छे के, शुद्ध चेतना उपादेय छे-ग्राह्य छे अने बीजा सकल भावरूप अशुद्ध चेतना औपाधिक होवाथी हेय छे–त्याज्य छे.) ८

आत्मा शुद्ध निश्चय नये सहजानंदस्वरूप अने निर्वि-

कार एवा नित्यसुखनो भोक्ता छे तोपण व्यवहार नये इन्द्रियोथी उत्पन्न थनारां सुख-दुःखनो भोक्ता छे, एवा अभिप्रायथी सूचवे छे:-

सूत्र—(गाथा)

ववहारा सुहदुक्खं पुग्गलकम्मफलं पभुंजेदि ॥
आदा णिच्छयणयदो चेदणभावो खु आदस्स ॥९॥

अर्थ:--व्यवहारनी अपेक्षाए आत्मा, ज्ञानावरणादि आठ प्रकारनां पुद्गलकर्मोना फळरूप सुख-दुःखने भोगवे छे; पण निश्चय नयनी अपेक्षाए आत्मानो चेतनभावज छे-एटले निश्चयदृष्टिए आत्मा सदा आनंदस्वरूप एवा सहज सुखामृतनोज भोक्ता छे. (तात्पर्य के, अतीन्द्रिय आभ्यंतर सुख उपादेय छे अने इन्द्रियजन्य बाह्य सुख हेय छे.) ९

हवे निश्चयदृष्टिए आत्मा, असंख्यात प्रदेशोवाळा लोकाकाशना प्रदेशना प्रमाणवाळो छे तोपण व्यवहारदृष्टिए स्वदेहप्रमाण छे- पोताने संबंधवाळा शरीरना प्रमाणनो छे, ए वात कहे छे:—

सूत्र—(गाथा)

अणुगुरुदेहप्पमाणो उवसंहाराप्पसप्पदो चेदा ॥
असमुहदो ववहारा णिच्छयणयदो असंखदेसो वा ॥१०

अर्थः--चेतनधर्मी आत्मा व्यवहारनी अपेक्षाए, कर्म-

संबंधथी प्राप्त थयेला पोताना नाना मोटा शरीरमां संकोचधर्मने तथा विस्तारधर्मने पामे छे; अने तेथीज ते ते नाना मोटा शरीरमां वेदना आदि सात प्रकारना समुद्घातना अभावे पोते पण नानो मोटो थाय छे. (जेम एक दीवो नाना पात्रमां राखेलो होय तो अल्प विस्तारने पामे छे अने मोटा पात्रमां राखेलो होय तो मोटा विस्तारने पामे छे तेम जीव नाना शरीरमां रहेलो होय तो ते शरीर जेवडो नानो बने छे अने मोटा शरीरमां रहेलो होय तो मोटो बने छे.

(अहीं प्रसंगने लीधे समुद्घातना भेद अने लक्षणो आपवामां आवे छे:—समुद्घात सात प्रकारना छे. जेमके वेदनासमुद्घात, कषायसमुद्घात, वैक्रियसमुद्घात, मरणांतिक समुद्घात, तैजससमुद्घात, आहारकसमुद्घात अने केवली समुद्घात. तेओनां लक्षणो:--पोताने तीव्र वेदना उत्पन्न थतां पोताना मूळ शरीरनो त्याग कर्या विना केटलाक आत्मप्रदेश शरीरनी बहार नीकळे ते [1] वेदना समुद्घात कहेवाय छे. तीव्र कषायनो उदय थतां मूलशरीरनो त्याग कर्या विना शत्रु वगेरेनो नाश करवा आत्मप्रदेशनुं शरीरनी बहार नीकळवुं ते [2] कषाय समुद्घात कहेवाय छे. मूल शरीरनो त्याग कर्या विना कोइ प्रकारनी विकुर्वणा करवा माटे देहथी आत्मप्रदेशनुं बहार नीकळवुं ते [3] वैक्रिय समुदघात कहेवाय छे. मरणसमये मूल शरीरनो त्याग कर्या विना अमुक कोइ गतिनुं आयुष बांधी ते स्थानने प्रकट करवा आत्मप्रदेशनुं बहार नीकळवुं ते

[४]मरणांतिक समुद्घात कहेवाय छे.[५] तैजस समुदघातना बे भेद छे. एक अशुभ अने बीजो शुभ. जेमके पोताना मनने दुःख उपजावनार एवा कोइने जोइने क्रोधायमान थयेला कोइ मुनि वगेरेना वामस्कंधप्रदेशमांथी सिंदूरना ढग समान लाल रंगनो, बार योजन लांबो, अंगुलना असंख्यभागे मूळ विस्तारवाळो अने एक योजन अंतिम विस्तारवाळो काहलानां (एक जातना वादित्रना) आकारनो कोइ पुरुष बहार नीकळे अने पोताना विरोधीनो नाश करी पोताना मूळ उत्पत्तिस्थान मुनिनी साथे पोते पण भस्म थइ जाय ते अशुभ तैजस समुदघात कहेवाय छे. तेज प्रमाणे सर्वलोकसमुदायने व्याधि- दुष्काळ वगेरेथी दुःखी थयेलो जोइ कृपापरायण थयेला कोइ महामुनिना शरीरना वामस्कंधप्रदेशमांथी पूर्वोक्तज आकार तथा प्रमाणनो एक पुरुषाकार नीकळी व्याधि-दुष्काळ वगेरेथी लोकोने मुक्त करी, फरी पाछो तेज मुनिना शरीरमां दाखल थाय छे तेने शुभ तैजस समुदघात कहेवामां आवे छे. चौद पूर्वने धारण करनार कोइ मुनि, अमुक कोइ संशय दूर करवा स्फटिक समान उज्वळ एक-हाथ प्रमाणनुं आहारक शरीर पोताना जमणा स्कंधप्रदेशमांथी काढी ते शरीरद्वारा केवली भगवानना समवसरणमां जाय अने त्यां संशय दूर करी एक अंतर्मुहूर्त समयमां पाछुं पोताना मूळ शरीरमां ते शरीरने दाखल करे, ते [६]आहारक समुद्घात कहेवाय छे; अने केवलीना आत्मप्रदेश, दंड-कपाट-मंथान-विवर

पूरणपणे परिणमी चौदराजलोकप्रमाणमां जे विस्तार पामे ते केवली समुदघात कहेवाय छे.)

व्यवहार नयनी अपेक्षाए आ सात प्रकारना समुदघातना समये आत्मा देहथी अधिक विस्तारवाळो थाय छे अने ते समुदघातना अभाव समये स्वदेहप्रमाणमां रहे छे. पण निश्चयनयनी अपेक्षाए तो आत्मा असंख्यात लोकाकाश प्रदेश प्रमाणनोज छे. (आ गाथानो तात्पर्यार्थ ए छे के, आत्मा देहादिनी ममताथी संसारमां अनेक प्रकारनां शरीर धारण करी भमे छे माटे देहादिनी ममता हेय छे अने शुद्ध आत्मभाव उपादेय छे.)

हवे त्रण गाथाओथी व्यवहार अने निश्चयनी दृष्टिए संसारी जीवनुं स्वरूप वर्णवे छेः--

सूत्र--(गाथा)

पुढविजलतेउवाउवणप्फुदी विविहथावरेंदी ॥
बिगतिगचउपंचक्खा तसजीवा होंति संखादी॥११॥

अर्थः--पृथ्वीकाय, अपकाय, तेजस्काय, वायुकाय अने वनस्पतिकाय-एम अनेक भेदो स्थावर जीवोना छे. आ स्थावर जीवोने केवळ एक स्पर्शेन्द्रिय होय छे. तेथी तेओ एकेन्द्रिय कहेवाय छे. आ सिवाय बे इंन्द्रिय, ते इंद्रिय, चउरिन्द्रिय तथा पंचेन्द्रिय--ए चार जातना जीवो त्रस कहेवाय

छे. तेओनी जाति शंख वगेरे छे. अर्थात् शंखादि जीवो बे इन्द्रिय छे, कुंथुवा-कीडी वगेरे तेइन्द्रिय छे, डांस-माखी भमरो वगेरे चउरिन्द्रिय छे अने मनुष्य-पशु वगेरे जीवो पंचेन्द्रिय छे. [सारांश ए छे के, स्थावर-त्रसपणारूप विभाव परिणामनो नाश करवा माटे शुध्धात्मभावना विषेज उद्यम करवो योग्य छे.) ११

उपरनी गाथामां जणावेला स्थावर जीव तथा त्रस जीवोना विशेष १४ भेद कहे छे:--

सूत्र--(गाथा)

समणा अमणा णेया पंचिंदिया णिम्मणा परे सव्वे॥
बादरसुहुमेगेंदी सव्वे पज्जत्त इदरायं ॥१२॥

अर्थः—पंचेन्द्रियना बे भेद छे. एक तो मनसहित-समनस्क एटले संज्ञी पंचेन्द्रिय अने बीजा मनरहित-अमनस्क एटले असंज्ञी पंचेन्द्रिय. एम पंचेन्द्रिय बे प्रकारना छे. ए सिवायना बीजा बे इन्द्रिय, तेइन्द्रिय तथा चउरिन्द्रिय निर्मनस छे-मनरहित छे-असंज्ञी छे. हवे जे एकेन्द्रिय जीवो छे तेना पण बे भेद छे. बादर एकेन्द्रिय-एटले दृष्टिथी जोइ शकाय तेवा एकेन्द्रिय अने बीजा सूक्ष्म एकेन्द्रिय--एटले दृष्टिथी न जोइ शकाय तेवा एकेन्द्रिय. अर्थात् संज्ञी पंचेन्द्रिय, असंज्ञी पंचेन्द्रिय, असंज्ञी बे इन्द्रिय, असंज्ञी तेइन्द्रिय, असंज्ञी चउरिंन्द्रिय, बादर एकेन्द्रिय तथा सूक्ष्म एकेन्द्रिय-एम

सात भेदो जाणवा. आ साते भेदो पर्याप्त अने अपर्याप्त–ए भेदथी चौद थाय छे. जे जातिना जीवो पोतानी जेटली पर्याप्ति होय तेटली पूरी करे ते पर्याप्त जीवो कहेवाय छे अने जेओ पोतानी पर्याप्ति पूरी न करे तेओ अपर्याप्त कहेवाय छे.[१२]

जो के शुद्ध निश्चय नयनी अपेक्षाए जीव, सर्वथा शुद्ध चैतन्यस्वभाव छे तो पण व्यवहारनी अपेक्षाए संसारी जीव १४ मार्गणारूप १४ गुणठाणांरूप छे–एवा आशयथी हवे कहे छेः––

सूत्र––(गाथा)

मग्गणगुणठाणेहिं चउद्दसं तह हवंति असुद्धणया॥
विण्णेया संसारी सव्वे सिध्धा दु सुध्धणया ॥१३॥

अर्थ––व्यवहार नयनी दृष्टिए मार्गणास्थाने करीने तथा गुणस्थाने करीने पण जीवना चौदज भेद थाय छे. अने ते मार्गणा तथा गुणस्थानरूप भेदवाळा ते जीवोने संसारीज जाणवा; पण शुद्ध नयनी दृष्टिए तो सर्व जीवो शुद्ध चिदानंद स्वभावज छे. (अहीं प्रसंगानुसारे चौद मार्गणाओनां नाम कहेवामां आवे छेः––चार गतिरूप [१] गतिमार्गणा, पांच इ-न्द्रियरूप[२] इन्द्रियमार्गणा, छ कायरूप[३] कायमार्गणा, त्रण योगरूप [४]योगमार्गणा, त्रण वेदरूप [५]वेदमार्गणा, चार कषायरूप[६] कषायमार्गणा, आठ ज्ञानरूप [७]ज्ञानमार्गणा, सात संयमरूप

[9]संयममार्गणा, चार दर्शनरूप [9]दर्शनमार्गणा, छ लेश्यारूप [10] लेश्यामार्गणा, भव्य-अभव्यरूप [11]भव्यमार्गणा, छ भेदवाळा सम्यक्त्वरूप [12]सम्यक्त्वमार्गणा, संज्ञी-असंज्ञीरूप [13]संज्ञीमार्गणा आहारक-अनाहारकरूप [14]आहारमार्गणाः-आ चौद मार्गणाना मूल भेद छे. तेना उत्तरभेद ६२ छे. चौद गुणस्थाननां नाम तो प्रसिद्धज छे.) १६

हवे आ १४ मी गाथामां पूर्वार्धथी जीवनुं सिद्धस्वरूप तथा उत्तरार्धथी ऊर्ध्वगमनस्वभाव कहे छेः—

सूत्र--(गाथा)

णिक्कम्मा अट्ठगुणा किंचूणा चरमदेहदो सिध्धा ॥
लोयग्गठिदा णिच्चा उप्पादवयएहिं संजुत्ता ॥१४॥

अर्थः—जीवोनुं सिद्धस्वरूप निष्कर्म छे-ज्ञानावरणादि आठ कर्मोथी रहित छे अने आठ गुणोवाळुं छे—एटले आठ कर्मोना क्षयथी प्राप्त थनारा आठ गुणोवाळुं छे—अर्थात् सिद्ध आत्माने ज्ञानावरण कर्मना क्षयथी अनंत ज्ञानरूप गुण प्रकटे छे, दर्शनावरणना क्षयथी अनंत दर्शन प्रकटे छे, वेदनीय कर्मना क्षयथी अनंत सुख प्रकटे छे, मोहनीय कर्मना क्षयथी क्षायिक सम्यक्त्व प्रकटे छे, आयुःकर्मना क्षयथी अनंत अवगाहना प्रकटे छे, नामकर्मना क्षयथी अमूर्त गुण प्रकटे छे, गोत्र कर्मना क्षयथी अ-गुरु-लघु गुण प्रकटे छे अने अंतराय कर्मना क्षयथी अनंत-वीर्य गुण प्रकट थाय छे. वळी ते सिद्ध आत्माओ चरम देहथी

एटले अंतिम शरीरथी किंचित् न्यून अवगाहनाने धारण करे छे—एटले के, असंख्यात प्रदेशमय पुरुषाकाररूप आत्मस्वरूपने धारण करे छे. कारण ए छे के आत्माना प्रदेश, शैलेशीकरणथी नासिका—मुख—उदर—वगेरे विवरोने पूर्ण करे छे तेथी घन बने छे, एटले तेओनी विरलता दूर थाय छे माटेज तेनी अवगाहना चरम शरीरथी किंचित न्यून छे, एम समजवुं.

हवे अहीं एक प्रश्न छे के, आत्मा निश्चयनयनी अपेक्षाए लोकाकाश प्रदेशना प्रमाणवाळो छे, परंतु व्यवहारनी दृष्टिए शरीरनामकर्मना उदयथी ते आत्मा पोते धारण करेला शरीरना प्रमाणनो बने छे—एटले के संकोचधर्म तथा विस्तार धर्म पामी स्वदेहप्रमाणनो बने छे एम कहेवामां आवे छे; पण चौदमा गुणठाणाने अंते सर्वथा शरीरना नाशथी ते आत्मा लोकाकाश प्रमाणज होवो जोइए; तो अहीं तो वळी एम कहेवामां आवे छे जे, चरमदेहथी न्यून होय छे—ते केम घटे? आ प्रश्ननो उत्तर ए छे के, आत्मानो संकोच तथा विस्तार केवळ कर्मने अधीन छे. आत्मा केवलीसमुद्घातना समये जे लोकाकाश प्रमाणमां विस्तरे छे ते पण केवळ कर्मनीज सहायथी एम समजवानुं छे. जो के, वस्तुतः आत्मा लोकाकाश प्रमाणज छे तोपण कर्मना अभाव समये ते तेटलाज प्रमाणमां विस्तार न पामी शके; आज कारणथी सिद्धावस्था समये जे शरीरथी आत्मा युक्त थाय छे तेज शरीरना प्रमाणथी कंइक ओछा प्रमाणमां अवगाहना करे, पण तेथी अधिक अवगा-

हना न पामी शके. दृष्टांत तरीके—जेम चार हाथना वस्त्रने कोइ पुरुष समेटी ले छे त्यारे वस्त्र नानुं बनी जाय छे अने विस्तार पमाडे छे त्यारे ते वस्त्र पाछुं तेटलाज प्रमाणमां विस्तरे छे—अर्थात् पुरुषना अभावे वस्त्रनो संकोच के विस्तार जेम नथी संभवतो तेमज शरीर—कर्मना अभाव समये आत्मानो पण संकोच के विस्तार न होइ शके; पण जे अवस्थामां तेने कर्म मूक्यो होय तेज अवस्थाए कंइक ओछा प्रमाणमां ते रहे, अस्तु.

वळी पण अहीं एक संशय थाय छे के, सिद्धस्वरूप थयेला आत्माने पूर्वना संबंधनो त्याग जो आ मनुष्यक्षेत्र-मांज थयेलो होय छे तो ते सिद्ध आत्मा लोकना अग्रभाग उपर गति केम करी शके—केवी रीते ते ऊर्ध्वगतिस्वभाव थइ शके? आ संशयने दूर करवा माटे आ गाथाना उत्तरार्द्धथी समजावे छे के, सिद्धस्वरूप ते आत्मा, लोकना अग्रभाग उपर आवेली सिद्धशिलानी उपर एक योजनविस्तारना प्रदेशना चोवीसमा भागमां स्थिति करीने रहे छे. ते सिद्धशिलारूप लोकना अग्रभागे पहोंचवामां आत्मानी ऊर्ध्व गतिना संबंधमां अहीं बराबर बंध बेसतां चार दृष्टांतो आ प्रमाणे आपवामां आवे छे. जेम माटीना लेपथी लीपेली एक तुंबडी जळमां नाखतांज ते माटीना संबंधथी जळमां डुबी जाय छे पण ते माटी ज्यारे धोवाइ जाय छे अने तुंबडी स्वच्छ थाय छे त्यारे तुरतज आपोआपज जळनी उपर आवीने रहे छे; अथवा जेम एरंडानुं एक फळ परिपक्व थइ ज्यारे फूटे छे त्यारे तेनी अंदर

रहेलां बी पोतानी मेळेज उंचा उछळी नीकळे छे; अथवा अग्निनी शिखा जेम स्वभावथीज उंची गति करे छे; अथवा जेम कुंभारनो चाक, दंडथी फेरव्यो होय त्यारे ते दंड दूर थया पछी पण अमुक समयसुधी तेमनो तेम फर्या करे छे तेम आत्मा पण कर्मना संबंधथी दूर थया पछी आपोआपज ऊर्ध्व गतिमान बने छे. जे कर्मे प्रथम आत्माने भमाव्यो होय छे ते कर्म जो के, दूर थइ गयुं होय छे तोपण आत्मा कुंभारना चाकनी पेठे अमुक समयसुधी एटले सिद्धशिलापर जइ पहोंचाय त्यांसुधी गतिमान होइ शके छे; आ रीते आत्मानो ऊर्ध्वगतिस्वभाव सिद्ध थाय छे.

हवे ते सिद्धात्माविषे उत्पादव्ययध्रौव्यस्वभाव पण कहे छे—ते सिद्धात्मा नित्य छे-एटले तेनुं सिद्धस्वरूप कदी मटतुंज नथी. सेंकडो कल्पो वीति जाय तोपण ते सिद्धात्मा पोताना सिद्धस्वरूपथी कदी भ्रष्ट थतो नथी, माटे तेनो ध्रौव्यस्वभाव पण सिद्ध थाय छे. आ सिद्धात्मा चौदमा गुठाणामां रहेलो समजवो. वळी ते सिद्धात्मा, उत्पादव्ययथी पण युक्त छे. अर्थात् उत्पाद एटले उत्पत्ति तथा व्यय एटले नाश-बन्नेथी पण युक्त छे. कहेवानो भाव ए छे के, सिद्धात्मा ज्ञानमय छे; तेमज ते सिद्धना ज्ञानविषे सकल ज्ञेय पदार्थना अवभासरूप पर्याय, हानि-वृद्धिरूपे परिणमे छे; एटले के, एक पर्याय उपजे छे त्यारे एक पर्याय विनाश पामे छे-अने तेथीज द्रव्यदृष्टिए ते सिद्धात्मा नित्य छे-ध्रुव छे अने पर्यायदृष्टिए उत्पादविना-

शवंत पण छे. आ उत्पाद–व्यय–ध्रौव्यस्वरूप जेम आत्मद्रव्यमां छे तेज प्रमाणे बीजां द्रव्योमां पण समजवुं. १४

हवे अजीवद्रव्य वर्णवे छेः कदाच कोइ शंका करे के, जीवद्रव्य सर्वथा उपादेय होवाथी ते विषे व्याख्यान करवुं ते तो योग्यज गणाय पण अजीवद्रव्य के जे सर्वथा हेय छे तेनुं व्याख्यान शा माटे? आना समाधानमां सूत्रकार पोतेज कहे छेः–

सूत्र—(गाथा)

अजीओ पुण णेयो पुग्गलधम्मो अहम्मआयासं॥
कालो पुग्गलमुत्तो रूवादिगुणो अमुत्तसेसा दु ॥१५॥

अर्थः—अजीवद्रव्य जो के हेय छे–सर्वथा त्याज्य छे तोपण ते ज्ञेय तो छे ज-तेनुं पण ज्ञान करवुं आवश्यक छेज. हेय वस्तु अने उपादेय वस्तु-बन्ने अवश्य जाणवीज जोइए; जेथी अजीवद्रव्यनुं व्याख्यान करवुं ते पण योग्यज छे. व्याख्यान विना विशेष ज्ञान न होइ शके; आ कारणथी हवे अजीवद्रव्य कहेवामां आवे छे. आ अजीवद्रव्यना पांच भेद छे. पुद्गल द्रव्य, धर्मास्तिकाय द्रव्य, अधर्मास्तिकाय द्रव्य, आकाशास्तिकाय द्रव्य अने काल द्रव्य. आ पांचमां पहेलुं जे पुदगलद्रव्य छे तेज केवळ मूर्त छे–मूर्तिमान छे. कारण के पांच प्रकारनुं रूप–पांच प्रकारनो रस–बे प्रकारनो गंध–आठ प्रकारनो स्पर्श–ए वीस गु-

णाथी ते युक्त छे अने तेथीज तेने मूर्त कहेवामां आवे छे. बाकीनां धर्मास्तिकाय वगेरे अजीवद्रव्य अमूर्त छे. १५

पुद्गल द्रव्य व्याख्यान:—

सूत्र—(गाथा)

सद्दो बंधो सुहुमो थूलो संठाणभेदतमछाया ॥
उज्जोदादवसहिया पुग्गलदव्वस्स पज्जाया ॥१६॥

अर्थः—(पुदगलद्रव्य बे प्रकारनुं छे. एक तो परमाणुरूप शुद्ध पुदगलद्रव्य अने बीजुं स्कंधपरिणत पुदगलद्रव्य. तेमांथी अशुद्ध पुदगलद्रव्यना भेद कहेवामां आवे छे.) एक तो शब्द पुद्गलद्रव्य. ते शब्दना बे भेद छे. एक तो भावात्मक शब्द अने बीजो भाषात्मक शब्द. तेमांथी भाषात्मक शब्दना पण बे भेद छे. एक अक्षरात्मक अने बीजो अनक्षरात्मक. तेमांनो अक्षरात्मक शब्द संस्कृत–प्राकृत–अपभ्रंश–पैशाचिक–मागध–शौरसेन-आर्य-म्लेच्छ-वगेरे-मनुष्यादिना व्यवहारनुं कारण अनेक प्रकारनो छे. अनक्षरात्मक शब्द पण बे इन्द्रिय वगेरे तथा तिर्यंच वगेरेना शब्दरूपे जाणवो; तेमज तीर्थंकर भगवाननी वाणीरूप जे दिव्य ध्वनि ते पण अनक्षर शब्दज छे. आ अनक्षरात्मक शब्दना वळी बे भेद छे. एक तो प्रायोगिक शब्द तथा बीजो वैश्रसिक शब्द. प्रायोगिक शब्द पुरुष वगेरेना प्रयत्नथी होय छे; अने ते पण चार प्-

कारनो छे. एक तो वीणा वगेरेनो ततशब्द; बीजो ढोल-नगारां वगेरेनो विततशब्द; त्रीजो ताल-कडताल वगेरेनो घनशब्द अने चोथो वांसळी वगेरेनो सुषिर शब्द. आरीते प्रायोगिक शब्दना चार भेद छे. वैश्रसिक शब्द स्वतःस्वभावे एटले कोइ जीवना प्रयत्न विनाज उत्पन्न थाय छे-जेमके मेघ वगेरेनी गर्जना. आना पण अनेक प्रकार छे. जीव, शुभ तथा अशुभ शब्दादि विषयोमां आसक्त थइ सुख-दुःख-नाम-कर्म उपार्जन करे छे अने तेना उदये व्यवहारदृष्टिए जीव ते ते स्वरूप कहेवाय छे पण निश्चयदृष्टिए सुख-दुःखादि सर्व, शब्दादिथी उत्पन्न थतां होइ पुद्गलज छे.

हवे बंध-पुदगलद्रव्य कहेवाय छे-बंधना बे भेद छे. एक भावबंध तथा द्रव्यबंध. तेमां भावबंध ते रागादि छे अने माटीना पिंडनी पेठे आठ प्रकारना कर्मनो जे बंध ते द्रव्यबंध कहेवाय छे.आ रीते बंधना बे भेद छे अने ते पण पुद्गल द्रव्यज छे.

हवे सूक्ष्म-पुदगलद्रव्य कहे छे-सूक्ष्म एटले बीजानी अपेक्षाए नानुं. जेम बीलीना फळनी अपेक्षाए बोर सूक्ष्म छे. परमाणु तो साक्षात् सूक्ष्मज छे. आ सूक्ष्मद्रव्य पण पुदगल द्रव्यज छे. तेज प्रमाणे स्थूल द्रव्यना संबंधे समजवुं. स्थूलद्रव्य एटले बीजानी अपेक्षाए मोटुं द्रव्य. जेम बोरनी अपेक्षाए बीलीनुं फळ स्थूल छे. वळी जगतव्यापी जे महास्कंध ते तो

साक्षात् स्थूल छे. आ सर्व स्थूलद्रव्य ते पुदगल द्रव्यज छे.

हवे संस्थान पुदगलद्रव्य कहे छे:—संस्थान एटले आकृति—आकार. ते पण समचोरस—त्रिकोण—चतुष्कोण वगेरे अनेक प्रकारनुं छे अने ते ते सर्व संस्थान पुदगलद्रव्यज छे.

ते पछी 'भेद'नामनुं पुदगलद्रव्य छे. जेम घउं-बाजरी वगेरेनो लोट अने घी-खांड वगेरे पदार्थो. आ सर्व भेद नामनुं पुदगल द्रव्यज छे. ते पछी 'तम' नामे पुदगलद्रव्य आवे छे. आ तम ते आंखना तेजने अटकावनार अंधकार नामनो पदार्थ छे अने ते पण पुदगलद्रव्यज छे. पछी 'छाया' नामनुं पुदगलद्रव्य छे. आ छायाद्रव्य वृक्षादि आश्रित अथवा मनुष्यादिकनी प्रतिछायारूप छे. आना पछी 'उद्योत' नामनुं पुदगलद्रव्य आवे छे. उद्योत एटले चंद्रमंडलनो के तारादि विमानोनो प्रकाश. आ पण पुदगलद्रव्यज छे; अने ते पछी 'आतप' नामे पुदगलद्रव्य छे. सूर्यविमान अथवा सूर्यकांतमणि वगेरेनो जे आतप ते पण पुदगलद्रव्यज छे. ए रीते समस्त पुदगलस्कंधने पुदगलद्रव्यना पर्याय जाणवा. तेमांना जे परमाणुगत पर्याय छे ते शुद्ध पुदगलपर्याय समजवा अने छ गुणे हानि—वृद्धिरूप परिणामवाळा तथा स्निग्ध—रूक्ष—वगेरे रूपना विभावगुणथी उत्पन्न थनारा जे द्व्यणुकादिस्कंध ते अशुद्ध पुदगलपर्याय समजवा. १६

धर्मास्तिकाय स्वरूप कथनः—

सूत्र—(गाथा)

गइपरिणयाण धम्मो पुग्गलजीवाण गमणसहयारी॥
तोयं जह मच्छाणं अच्छंता णेव सो णेइ ॥१७॥

अर्थः—गमनक्रियारूपे परिणाम पामेलां पुदगलद्रव्यने तथा जीवद्रव्यने तेमनी गमनक्रियामां जे सहायकारण छे-साहाय्यदाता छे ते धर्मास्तिकायद्रव्य कहेवाय छे. जो के जीव-पुदगलनी गमनक्रियानुं उपादान कारण-मूळ हेतु, जीव-पुदगल पोतेज छे तोपण धर्मास्तिकायरूप असाधारण कारण विना जीव-पुदगल कदी गमन करी शके नहि. जो धर्मास्तिकायनी सहायविनाज जीव-पुदगल गमन करी शकतां होय तो तेओ अलोकमध्ये कां नथी जइ शकतां ? जीवनी तथा पुदगलद्रव्यनी शीघ्रगति तो एक समयमां चौद राजलोक सुधीनी कहेवामां आवी छे छतां ते अनंतशक्तिमान जीवद्रव्य तथा पुदगलद्रव्य, धर्मास्तिकायरूप सहायिकारणना अभावथीज अलोकमध्ये गति करी शकतां नथी. आ रीते धर्मास्तिकायद्रव्य, जीव-पुदगलने गति-सहायदाता छे ए वातने दृढ समजाववा माटे अहीं एक दृष्टांत आपे छेः-जेम पाणी माछलांने गमनक्रियामां सहायक छे-एटले पाणी विना जेम माछलुं गमनक्रिया करी शकतुं नथी तेम धर्मास्तिकायनी सहायविना जीव-पुदगवद्रव्य गतिक्रिया करी शके नहि; पण ते जीवद्रव्य तथा पु-

दगलद्रव्य एक स्थळे स्थिति करी रह्यां होय तो बलात्कारे-जबरजस्तीथी धर्मास्तिकाम तेमने गतिक्रियामान करी शके नहि. अर्थात् जीव-पुदगलद्रव्ये स्वतःज गमनक्रियानो प्रारंभ कर्यो होय त्यारेज धर्मास्तिकाय तेओने सहायक थाय छे.१७

अधर्मास्तिकाय व्याख्यानः—

सूत्र--(गाथा)

ठाणजुयाण अहम्मो पुग्गलजीवाण सहयारी॥
छाया जह पहियाणं गच्छंता णेव सो धरइ॥१८॥

अर्थः—स्वतः-स्वस्वभावे एक स्थळे स्थिति करतां जीव--पुदगल द्रव्यने स्थिति कराववामां जे सहायी छे तेने अधर्मास्तिकाय द्रव्य कहेवामां आवे छे. जेम मध्यान्ह समये तापथी अतिदुःखी थयेला मुसाफरोने कोइ स्थळे आराम लेवानी इच्छा तो स्वतःज उदभवेली छे अने तेओना ते इच्छाने मार्गमां आवेली वृक्षादिनी छाया जेम सहायी बने छे तेम जीव-पुगदलद्रव्य पण अधर्मास्तिकायनी सहाय पामी स्थिति करे छे. जेम कोइ आसन्नभव्य जीव, पोताना शुद्धात्मभावथीज मुक्त होइ शके छे छतां पण अरिहंतादिनी भक्तिरूप बाह्य भावना ते भव्य जीवने व्यवहार दृष्टिए सहायी कारण बने छे तेम पोतानी शक्तिरूप उपादान कारणथीज स्थिति करतां जीव-पुदगलने मात्र बाह्य निमित्तथीज अधर्मास्तिकाय सहाय बने

छे; पण ते जीव-पुदगलद्रव्य जो गमन करी रह्यां होय तो अधर्मास्तिकाय पोतानी इच्छाथी तेओने अटकावी शके नहि. अर्थात् धर्मास्तिकाय, स्थिति करी रहेलां जीव-पुदगल द्रव्यने जेम गमन करावी शके नहि तेम अधर्मास्तिकाय, गमन करतां जीव-पुदगल द्रव्यने स्थिति करावी शके नहि. १८

आकाशास्तिकाय स्वरूप कथन:—

सूत्र--(गाथा)

अवगासदाणजोग्गं जीवादीणं वियाण आयासं।
जोन्हं लोगागासं अलोगागासमिदि दुविहं ॥१९॥

अर्थः--जीवादि छ द्रव्यने अवकाश आपवानी जे योग्यता धरावे छे-ते ते द्रव्योने जे अवकाश आपे छे ते आकाशद्रव्य जाणवुं. अहीं एक प्रश्न छे के, एकज जीवद्रव्य असंख्यात प्रदेश लोकाकाश प्रमाणनुं छे अने तेवां अनंतानंत जीवद्रव्यो छे; आ जीवद्रव्य करतां अनंतगणुं पुदगलद्रव्य छे; धर्मद्रव्य पण असंख्यातप्रदेशी छे; तेमज अधर्मद्रव्य पण असंख्यातप्रदेशी छे; तेमज कालद्रव्य पण असंख्यातुंज छे. आ समग्र द्रव्यो एकला लोकाकाशमांज अवकाश केम पामी शके ? केम तेओ संकीर्णता (संकडामण) न पामे ? आ प्रश्नना उत्तर तरीके एक दृष्टांत अहीं कहेवाय छे:-जेम एक दीवानी ज्योतिमां अनेक दीवानी ज्योति समाइ जाय छे अथवा मात्र एकज गदीयाणा

जेटला पारानी गोटीमां जेम अनेक मण सोनुं समाइ जाय छे छतां ते गोटीनुं प्रमाण नथी वधतुं के नथी घटतुं–आवी अमुक कोइ कोइ वस्तुमां शक्ति रहेली होय छे–तेज प्रमाणे आकाशद्रव्यमां पण तेवा प्रकारनी तेनी कोइ शक्तिना सामर्थ्यथी समग्र द्रव्यो विना संकोचे समाइ जाय छे; आवुं आकाशद्रव्यनुं स्वरूप भगवान जिनेश्वरे वर्णवेलुं छे. ते आकाशद्रव्य बे प्रकारनुं छे. एक लोकाकाश अने बीजुं अलोकाकाश. जो के, आकाशद्रव्य स्वतःज अमूर्त, अखंड तथा अवयवरहित होवाथी तेना भेद संभवे नहि तोपण औपाधिक भेदनी दृष्टिए आकाशना बे भेद कहेवामां आव्या छे. १९

लोकाकाश–अलोकाकाश विभाग वर्णनः—

सूत्र—(गाथा)

धम्माधम्मा कालो पुग्गलजीवा वसंति जावदिए ॥
आयासे सो लोगो तत्तो परदो अलोगुत्ति ॥२०॥

अर्थः–धर्म, अधर्म, काल, पुदगल अने जीव-आ पांचद्रव्यो जेटला आकाशप्रदेशमां रहे ते लोकाकाश कहेवाय छे. जो के छये द्रव्यो पोतानी शक्तिथी–कोइनी सहाय लीधा विना स्वभावेज स्थिति करी शके छे तोपण व्यवहारदृष्टिए सर्वद्रव्योनो आधार आकाश छे; माटे जे पांचे द्रव्यने आधाररूपे परिणमे छे ते लोकाकाश कहेवाय छे; अने तेथी बीजुं अलोकाकाश

कहेवाय छे. आ लोकाकाश अनंत प्रदेशरूप छे अने तेमां शुद्ध आकाशप्रदेश विना अन्य कोइ पण द्रव्य नथी. २०

हवे निश्चय तथा व्यवहारनी अपेक्षाए काळद्रव्यनुं स्वरूप कहे छे:—

सूत्र—(गाथा)

दव्वपरिवट्टरूवो जो सो कालो हवेइ ववहारो॥
परिणामादीलक्खो वट्टणलक्खो दु परमट्ठो ॥२१॥

अर्थ—जीवद्रव्य अने पुदगलद्रव्यना नव पुरातन पर्याय वगेरेनी अमुक समयसुधीनी जे स्थिति ते व्यवहार काळद्रव्य कहेवाय छे. याद राखवुं जोइए के, जीव–पुदगलद्रव्यना नव पुरातन पर्यायो ते कालद्रव्य नथी पण तेओनी जे स्थिति तेज कालद्रव्य छे. कदाच कोइ कहे के, काळद्रव्य अरूपी होवाथी तेने केम जाणी शकाय? तेना उत्तरमां कहे छे:–जीव–पुदगलना अनेक प्रकारना जे परिणामो–जेवा के, एक पर्यायथी बीजा पर्यायरूप परिणाम तथा जीव–पुदगलनी गमनादि क्रिया–तंडुलपचनादि क्रिया–वगेरे परिणामो उपरथी व्यवहार काळद्रव्यने जाणी शकाय छे. कहेवानो भाव ए छे के, जीव–पुदगलनां परिणाम तथा क्रिया–ए सर्व कार्य, कालद्रव्यनी सहाय विना कदी होइ शके नहि; अने तेथीज कालद्रव्यने जाणी शकाय छे. वळी परधर्म तथा अपरधर्म उपरथी पण काळद्रव्य

जाणी शकाय छे. जेने उत्पन्न थये अमुक घणो समय थइ गयो होय ते पर कहेवाय छे अने जेने उत्पन्न थये अमुक अल्प समय थयो होय ते अपर कहेवाय छे. जेम पुत्रनी अपेक्षाए पिता पर छे अने पितानी अपेक्षाए पुत्र अपर छे. आ पर-अपरनुं असाधारण कारण काळविना बीजुं कोइ पण नथी; माटे पर-अपरना कारण तरीके पण काळद्रव्यनुं अनुमान थइ शके छे.

ए रीते व्यवहारकाळनुं स्वरूप दर्शाव्युं; हवे निश्चय काळनुं स्वरूप वर्णवे छेः—वर्तनालक्षण जे परमार्थ काळ ते निश्चय काळ छे. वर्तना एटले—सर्व प्रकारनां द्रव्यो पोतपोताना स्वभावे करी अनेक परिणामने पामे छे अने तेओना ते ते परिणामने समये—एक परिणामथी बीजा परिणामनी उत्पत्तिविषे काळद्रव्यनुं जे सहायपणुं तेज वर्तना छे अने तेनेज वर्तना-निश्चय काळद्रव्य कहेवामां आवे छे. भावार्थ ए छे के, सर्व प्रकारनां द्रव्यो पोतपोताना उपादान कारणथी अनेक प्रकारनां परिणामने पामे छे अने षड्गुण हानि-वृद्धिरूप ते ते तेओनी परिणतिनी उत्पत्तिमां काळद्रव्य सहकारी कारण तरीके बने छे. काळद्रव्यनी सहाय विना कोइपण द्रव्य कदी परिणमी शके नहि; दृष्टांत तरीके—माटीरूप उपादान कारणथी घटरूप कार्य बने छे पण ते घटकार्य पोतानी उत्पत्तिमां कुंभारना चाकनी तथा ते चाक फेरववाना दंडनी सहकारी कारण तरीके अपेक्षा राखेज छे; ते ते सहकारी कारण विना घटकार्य कदी बनी शकतुं

नथी तेम, सर्व द्रव्यो पोतपोतानां उपादान कारणथी अनेक परिणामरूपे उत्पन्न थतां काळद्रव्यनी सहकारी कारण तरीके अपेक्षा राखेज छे.

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, समग्र पदार्थ परिणामी छे अने ते ते सर्व द्रव्योना परिणाममां काळद्रव्य सहकारी कारण छे, ए तो समजाय छे पण काळद्रव्यने पोताने पोताना परिणाममां कोण सहकारी कारण छे? आना उत्तरमां कहे छे-जेम आकाशद्रव्य अन्य सर्व द्रव्यने अवकाश आपे छे छतां पोताने पण ते पोतेज अवकाश आपे छे. तेम काळद्रव्य पण पोतानी परिणामदशामां पोतेज सहकारी कारण बने छे.

आ उपरथी वळी पण एक प्रश्न उभो थाय छे के, आकाशद्रव्यनी पेठे काळद्रव्य पण पोतेज पोताना परिणाममां सहकारी कारण बने छे, एम कहेवामां आव्युं; तो जीवद्रव्य तथा पुद्गलद्रव्यना गतिपरिणाममां अने स्थितिपरिणाममां धर्मद्रव्य तथा अधर्मद्रव्य सहकारी कारण शा माटे होवां जोइए ? कया कारणथी तेओ पण पोतपोताना परिणाममां पोतेज सहकारी कारण न बने ? पछी धर्मास्तिकायनुं तथा अधर्मास्तिकायनु शुं प्रयोजन रहे छे ? तेमज सर्व द्रव्योनुं सहकारी कारण जे काळद्रव्य तेनुं पण शुं प्रयोजन छे? आकाश द्रव्यनुं पण शुं प्रयोजन छे ? सर्व कोइ द्रव्य पोतपोताना परिणाममां पोतेज उपादान कारण तथा सहकारी कारण बनी

रहे अने कोइ पण द्रव्यने बीजा कोइ पण द्रव्यनी सहाय जो जरूरी नज रहे तो केवळ एक जीवद्रव्य तथा बीजुं पुदगल द्रव्य-ए बेज द्रव्यो निश्चळ रहेशे पण बीजां चार द्रव्योनुं अस्तित्वज नहि रहे!! आ वात शुं जिनागम विरुद्ध नथी? आ प्रश्ननो उत्तर कहे छेः—भगवान वीतराग कदी अन्यथा-वादी नज होय, जिनागममां जे छ द्रव्यो कहेवामां आव्यां छे ते सत्यज छे. आ वात खात्रीपूर्वक मानवी जोइए के, जिनोक्त समग्र पदार्थ अनुभवप्रत्यक्ष छे. काळद्रव्यनां कार्य घडी-आवली वगेरेने जो आपणे प्रत्यक्ष अनुभवीए छीए तो काळ द्रव्यनुं नास्तित्व केम स्वीकाराय? तेज प्रमाणे काळ द्रव्यनी पेठे धर्मास्तिकाय वगेरे द्रव्य पण अनुमानादिथी सिद्धज छे. छये द्रव्यनुं स्वरूप जे प्रमाणे जिनागममां कह्युं छे ते तेमज छे एमां अन्यथा नथी. जेम धर्मास्तिकाय वगेरे पदार्थो जीव-पुदगलना गत्यादि परिणाममां सहकारी कारण छे तेम काळ द्रव्य पण सर्व द्रव्योनी परिणतिमां सहकारी कारण होइने पोते पोतानी परिणतिमां पण सहकारी कारण छे. जिनेश्वर देवे सर्व पदार्थोने अनन्तधर्मात्मक कह्या छे तेथी युक्तिप्रमाण, अनुभवप्रमाण तथा आगमप्रमाणना आधारे जे धर्म जे पदार्थमां कहेवामां आव्या छे ते घटेज छे; माटे काळ द्रव्यने स्वपरपरिणतिमां जे सहकारी कारण कहेल छे ते सप्रमाण छे-प्रमाणपूर्वकज कहेवामां आव्युं छे. जेम जीव पोताना स्वरूपनो तथा अन्यना स्वरूपनो प्रकाशक छे तेथी ते स्वपरप्रकाशक

कहेवाय छे तेम काळद्रव्य पण स्वपरपरिणतिनुं सहकारी कारण छेज. आ रीते निश्चय काळद्रव्य जाणवुं, २१

हवे ते निश्चय काळद्रव्यने रहेवानुं स्थळ, क्षेत्र तथा कालाणुद्रव्यनी संख्या कहेवामां आवे छेः-

सूत्र—(गाथा)

लोयायासपएसे इक्किक्के जे ठिया हु इक्किक्का ॥
रयणाणं रासीमिव ते कालाणुअसंखदव्वाणि ॥२२॥

अर्थः—जेम रत्नोना एक ढगमां अनेक संख्यावाळां रत्नो पोतपोतानी जूदी जूदी सत्ताए ढगरूपे एकठां रह्यां होय छे तेम, कालाणुद्रव्य लोकाकाशना एक एक प्रदेशमां एक एक परस्पर असंलग्न—जूदां जूदां रहे छे; तेमज कालना आ अणुओ, असंख्यात छे—अर्थात् लोकाकाशना प्रदेश असंख्यात छे अने ते एक एक प्रदेशमां कालनो अणु पण एक एक रहेलो छे तेथी कालना अणुओ पण असंख्यात छे.

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, समग्र द्रव्योनी परिणतिमां कालद्रव्य सहकारी कारण छे अने ते काळद्रव्यने रहेवानुं क्षेत्र लोकाकाश कहेवामां आवे छे तो अलोकमध्यवर्ती आकाश द्रव्यने सहकारी कोण ? अलोकमध्ये तो कोइ पण द्रव्यनो अभावज छे. आना उत्तरमां कहेवामां आवे छे के, लोकाकाश अने अलोकाकाश—आ बन्ने कंइ जूदा जूदा खंड

नथी, पण ते अभिन्न—अखंड दंडरूप छे. आवा कारणथी लोकाकाशनी परिणतिने सहकारी थतुं ते कालद्रव्य, अलोकाकाशनी परिणतिने पण सहकारी होइ शके छे. जेम अखंड एवा एक दंडने कोइए अमुक एक भागमां हलाव्यो होय तो पण संपूर्ण सर्वांगे ते हले छे, तेम काळद्रव्यनी सहकारिकारणता लोकाकाशप्रदेशमां व्याप्त थतां तेना अवयवरूप अलोकाकाशमां पण व्यापे छे.

वळी पण एक प्रश्न छे के, काळ द्रव्य जो समग्र द्रव्योना परिणाममां सहकारी छे तो आत्मानी जे मुक्तिरूप शुद्ध परिणति तेमां पण ते सहकारीकारण होवो जोइए; अने जो एमज होय तो काळद्रव्य पण उपादेयज थयुं. प्रथम कहेवामां तो एम आव्युं छे के, एक आत्मा विना समग्र द्रव्यो हेय छे, अथवा ज्ञेय छे पण उपादेय तो नथीज; तो अहीं काळ द्रव्यने उपादेय समजवुं के हेय ? आनो उत्तर कहे छेः—आत्मानी मुक्तिरूप शुद्धपरिणतिनुं कारण वीतराग चारित्र छे. वीतराग चारित्ररूप शुद्ध उपयोग जो न होय तो केवळ एकलुं कालद्रव्य मुक्तिरूप शुद्ध परिणतिनुं सहकारी कारण कदी न थइ शके. आवाज कारणथी कालद्रव्य हेय छे पण उपादेय नथी. वास्तविक रीते तो एज योग्य छे जे, भगवान वीतरागे काळद्रव्यादि जे जे अमूर्तद्रव्यो दर्शाव्यां छे ते संबंधे छद्मस्थ जीवे संशय करवो अघटित छे. ते ते जिनभाषित द्रव्योमां तेना तेना स्वरूपस्थापन निमित्ते जे कंइ युक्ति—तर्क वगेरे करवामां आवे ते पण आगमविरूद्ध नज होवां जोइए. वीत-

राग सर्वज्ञ देवे जे जे पदार्थो कह्या छे ते कदी असत्य नथीज. आवो निश्चय करी विवादनो सर्वथा त्याग करवो. केमके विवादथी रागद्वेष उत्पन्न थाय छे अने रागद्वेष संसारवृद्धिनुं कारण बने छे. २२

आटला ग्रंथथी षडद्रव्यनुं स्वरूप वर्णव्युं; हवे पांच गाथाओथी पंचास्तिकायनुं स्वरूप कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

एवं छब्भेयमिदं जीवाजीवप्पभेददो दव्वं ॥
उत्तं कालविजुत्तं णादव्वा पंच अत्थिकाया दु ॥२३॥

अर्थः—ए प्रमाणे जीव–अजीवभेदथी छ प्रकारनुं द्रव्य कहेवामां आव्युं; तेमांथी काळद्रव्यने बाद करतां बाकीनां जे पांच द्रव्य रहे छे तेने अस्तिकाय कहेवामां आवे छे; एटले काळद्रव्य सिवायनां बीजां सर्व द्रव्योने पंचास्तिकाय कहेवामां आवे छे. २३

हवे 'अस्ति' शब्द तथा 'काय' शब्दनो अर्थ कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

संति जदो ते णेदे अत्थित्ति भणंति जिणवरा जम्हा ॥
काया इव बहुदेसा तम्हा काया य अत्थिकाया य ॥२४

अर्थः—जिनवरो कहे छे के, जीवादि पांच पदार्थो

आपणी सत्ताए विद्यमान छे–तेओनी 'नास्ति' कदी काळे थती नथी माटे तेओने 'अस्तिरूप' कहेवामां आवे छे; तेमज कायनी पेठे बहु प्रदेशवाळां छे तेथी 'कायरूप' कहेवाय छे. कहेवानो भाव ए छे के, जेम काय–शरीर, बहु पुद्गलप्रदेशस्कंधथी 'काय' कहेवाय छे तेम जीवादि पांच द्रव्यो पण एक एक द्रव्य अनेक प्रदेशमय छे तेथी 'काय' कहेवाय छे. आ रीते जीवादि पांचे पदार्थो, अनादि–अनंत-सत्तारूप 'अस्ति' धर्मथी युक्त छे अने बहुप्रदेशमय 'काय' धर्मथी युक्त छे तेथी 'अस्तिकाय' कहेवाय छे; जेमके--जीवास्तिकाय, पुद्गलास्तिकाय, धर्मास्तिकाय, अधर्मास्तिकाय अने आकाशास्तिकाय. २४

हवे जीवादि द्रव्योमां बहुप्रदेशपणुं केवी रीते छे ते वात कहे छेः—

सूत्र--(गाथा)

होंति असंखा जीवे धम्माधम्मे अणंत आगासे॥
मुत्ते तिविह पएसा कालस्सेगो ण तेण सो काउ॥२५॥

अर्थः—जीवद्रव्यने विषे असंख्यात प्रदेश छे-एटले एक जीवद्रव्य असंख्यात प्रदेशमय छे. एम समग्र जीवद्रव्य जाणवां. तेजप्रमाणे धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय पण असंख्यात प्रदेशमय छे. आ धर्मास्तिकाय तथा अधर्मास्तिकाय असंख्यात प्रदेशमय लोकप्रमाण एक सत्ता धरे छे. आकाशद्रव्यने विषे

अनंत प्रदेश छे–एटले आकाशद्रव्यनी अनंतप्रदेशमय लोका-लोक मात्र एक सत्ता छे; मूर्त एवुं जे पुदगलद्रव्य तेमां त्रण प्रकारना प्रदेश छे. एक तो संख्यात पुदगल परमाणुस्कंधरूप संख्यात प्रदेशी पुदगलद्रव्य, बीजुं असंख्यात परमाणुमयरूप असंख्यात प्रदेशी पुदगलद्रव्य अने त्रीजुं अनंत परमाणुमय स्कं-धरूप अनंतप्रदेशी पुदगलद्रव्य. ए प्रमाणे मूर्तद्रव्य–पुदगलद्र-व्यमां त्रण प्रकारना प्रदेश जाणवा. आ पांचे द्रव्यो ए रीते बहुप्रदेशमय छे तेथीज तेओने 'अस्तिकाय' कहेवामां आवे छे पण काळद्रव्य तो मात्र एकज प्रदेशवाळुं छे–कालाणुरूप काळद्रव्य मात्र एक प्रदेशी छे तेथी ते 'काय' कहेवाय नहि. जो के, कालद्रव्यना अणु असंख्यात छे तोपण ते एक एक कालाणु एक बीजा साथे मळीने पोतानी जूदी जूदी सत्ता धरे छे अने समग्र कालाणुरूपे रहे छे; माटेज ते कालद्रव्य बहुप्र-देशी नथी. वळी समयरूप जे निकृष्ट कालपर्याय छे तेनुं उ-पादान कारण पण एक कालाणुज छे अने ते पण एकप्रदेशीज छे. आत्रा आशयथीज कालद्रव्यने 'काय' कह्युं नथी.

जो के पुदगल परमाणु एकप्रदेशी छे तोपण उपचारे करी पुदगल काय कहेवाय छे, एवा आशयथी कहे छे:—

सूत्र—(गाथा)

एयपएसो वि अणू णाणाखंधप्पदेसदो होदि ॥
बहुदेसो उवयारा तेण य कायं भणंति सव्वण्णू ॥२६॥

अर्थः—पुदगलद्रव्य जो के एक प्रदेशी छे तोपण सं-

ख्यात प्रदेशी स्कंध, असंख्यात प्रदेशी स्कंध, अनंत प्रदेशी स्कंध-वगेरे स्कंधना बहुस्कंधबहुप्रदेशपणाथी पुदगलद्रव्य बहुप्रदेशी कहेवामां आव्युं छे; अर्थात् निश्चयदृष्टिए पुदगलद्रव्य एक प्रदेशीज छे तोपण उपचार मात्रथी-एटले व्यवहारनी अपेक्षाए तेने बहुप्रदेशी कह्युं छे अने तेथीज सर्वज्ञ भगवाने ते पुदगलद्रव्यने 'पुदगलास्तिकाय' कह्युं छेः हवे अहीं एक प्रश्न छे के, जेम पुदगलद्रव्य परमाणु-द्व्यणुकादि स्कंधरूप होइ बहुप्रदेशी कहेवाय छे तेम, कालद्रव्य पण कालाणु-द्व्यणुकादि स्कंधरूप बहुप्रदेशी केम न कहेवाय? आ प्रश्ननो उत्तर ए छे के, पुदगलद्रव्यमां स्निग्धता-रूक्षता वगेरे विभाव गुणो छे अने तेथी बे पुदगल परमाणु एकठा मळी द्व्यणुकादि स्कंधरूपे परिणमे छे पण कालद्रव्यमां स्निग्धता-रूक्षतावगेरे विभाव गुणो नथी अने तेने लीधे बे कालाणु कदी एकठा मळी शके नहि तेमज स्कंधरूपे परिणमे नहि, आ कारणथीज कालद्रव्य एक प्रदेशी छे, बहुप्रदेशी नहि. २६

प्रदेशस्वरूप कथनः—

सूत्र--(गाथा)

जावदियं आयासं अविभागी पुग्गलेण उट्ठद्धं ॥
तं खु पदेसं जाणे सव्वाणुट्ठाणदाणरिहं ॥ २७ ॥

अर्थः—जेटलुं आकाशद्रव्य अविभागी पुदगलपरमाणुथी अवष्टब्ध-आश्रित थाय-रोकाय तेटला आकाशक्षेत्रने

प्रदेश जाणवो. एटले के, एक पुदगल परमाणु जेटला आकाशने रोकी रहे तेटला आकाशने एक आकाशप्रदेश जाणवो. एम बीजा पण समग्र द्रव्यप्रदेशने आकाशप्रदेशसमान जाणवा. ए एक आकाशप्रदेश, सर्व पुदगलपरमाणुने तथा समग्र सूक्ष्म पुदगलस्कंधने अवकाश आपवानी योग्यता धरावे छे—एवा प्रकारनी ते आकाशप्रदेशनी अवकाशदानशक्ति छे. जो तेनामां एवा प्रकारनी शक्ति न होय तो अनंतानंत षड्द्रव्यने असंख्यात प्रदेश लोकाकाशमां केम समावी शके! ते आकाशद्रव्यनुं स्वरूप पहेलां पण कहुंज छे.

हवे अहीं एक शंका थाय छे के, पुदगलद्रव्य मूर्त होवाथी तेनो परमाणुरूप भेद घटे छे, पण आकाश वगेरे जे अमूर्तद्रव्य छे तेना प्रदेशरूप भेद केम घटे? आ शंकानुं समाधान ए छे के, जेम कोइ बे मुनिओ बेठा छे. ते बन्ने मुनिओनुं बेसवानुं क्षेत्र एक कहेवाय के बे जूदां जूदां क्षेत्र कहेवाय? जो बन्नेनुं एक क्षेत्र कहीए तो बन्ने जण एक क्षेत्रमां केम रही शके; ते माटे बन्ने मुनिओनां बेसवानां क्षेत्र जूदां जूदांज कहेवां पडशे. तेम आकाशादि जे अमूर्तद्रव्योनो भेद कहेवामां आव्यो छे ते पण औपाधिक भेदज समजवो. निश्चयदृष्टिए तो कोइ जातनो भेदज नथी.

इतिश्री—द्रव्यसंग्रह ग्रंथमां षड्द्रव्यपंचास्तिकाय प्रतिपादक प्रथम अध्याय समाप्त.

हवे जीव-अजीव पुद्गलद्रव्यना पर्याय-आश्रवादि
सात पदार्थ वर्णवे छेः—

सूत्र—(गाथा)

आसव-बंधण-संवर-णिज्जर-मोक्खा-सपुण्णपावा जे ॥
जीवाजीवविसेसा ते वि समासेण पभणामो ॥२८॥

अर्थः—आश्रव पदार्थ, बंध पदार्थ, संवर पदार्थ, निर्जरा पदार्थ, मोक्ष पदार्थ, पुण्य पदार्थ अने पाप पदार्थ आ सात पदार्थो जीवद्रव्य तथा अजीवद्रव्यना विशेष जाणवा. तेओ संबंधे हवे संक्षेपमां कहेवामां आवे छे. आ सात पदार्थोमां जेओ चेतनभाव—ज्ञानरूप भाव छे तेओने जीवद्रव्यना विशेष जाणवा अने जेओ अचेतनभाव—जडभाव छे तेओने अजीव—पुद्गलद्रव्यना विशेष—पर्याय जाणवा.

आश्रव पदार्थ स्वरूप कथनः—

आसवदि जेण कम्मं परिणामो अप्पणो स विण्णेओ ॥
भावासवो जिणुत्तो दव्वासवणो परो होदि ॥२९॥

अर्थः—आश्रव पदार्थना बे भेद छे. एक तो भावाश्रव अने बीजो द्रव्याश्रव. तेमांनो भावाश्रव ते ए छे के, जेणे करी कर्मपुद्गल आत्मानी समीप आवे एवुं आत्मानुं जे कोइ प-

रिणाम तेने भावाश्रव जाणवो, एम भगवान जिनेश्वर कहे छे. ए सिवाय बीजो द्रव्याश्रव जाणवो. आ विषे आगळ कहेवाशे. २९

आश्रवना भेद पैकी भावाश्रवरूप आत्मपरिणामनुं
विशेष विवरण:—

सूत्र—(गाथा)

मिच्छत्ताविरदिपमादजोगा कोधादओ य विण्णेया ॥
पणपणपणदसतियचउ कमसो भेदा दु पुव्वस्स ॥३०॥

अर्थः—मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योग अने क्रोध वगेरे कषायने भावाश्रव जाणवा. तेमां पोताना आत्मस्वरूपनी जे विपरीत श्रद्धा ते आभ्यंतर मिथ्यात्व छे अने जिन भगवाने कहेला जीवादि पदार्थ उपर जे विपरीत श्रद्धा ते बाह्य मिथ्यात्व छे. आ मिथ्यात्वरूप जे आत्मपरिणाम ते भावाश्रव कहेवाय छे. तेमज आत्मा, पोताना सहजसुखसुधारसथी विपरीत थइ इन्द्रियाधीन सुखनी जे इच्छा करे ते आभ्यंतर अविरति छे अने प्राणातिपातविरमण वगेरे व्रतनो जे सर्वथा अभाव ते बाह्य अविरति छे. आ अविरतिरूप जे आत्मपरिणाम ते पण भावाश्रव छे. वळी शुद्ध आत्मानुभवथी परिणामनुं जे चलन ते आभ्यंतर प्रमाद छे अने मूळगुण तथा उत्तरगुणने मलिन करनारां जे परिणाम ते बाह्य प्रमाद छे. आ प्रमादरूप आत्मपरिणाम पण भावाश्रव छे. कर्मपुदगलने ग्रहण करवाने आ-

त्मप्रदेशनी जे चंचळता ते आभ्यंतर योग कहेवाय छे अने मन-वचन-कायानो जे व्यापार ते बाह्य योग कहेवाय छे. आ योग-रूप जे आत्मपरिणाम ते पण भावाश्रव कहेवाय छे. तेजप्रमाणे परम उपशममूर्ति-केवळज्ञानादि अनंतगुणवाळा पोताना शुद्ध स्वभावने क्षोभकारक जे आत्मपरिणाम ते आभ्यंतर क्रोधादि कषाय छे अने कोइ अनिष्ट वस्तुना संबंधमां जे क्रूर परिणाम ते बाह्य क्रोधादि कषाय कहेवाय छे. आ क्रोधादि कषायरूप जे आत्मपरिणाम ते पण भावाश्रव छे. ए रीते भावाश्रवना भेदरूप मिथ्यात्व, अविरति, प्रमाद, योग तथा क्रोधादिना पण अनुक्रमे आ प्रमाणे भेद समजवा-मिथ्यात्व, विपरीत मिथ्यात्व, विनयमिथ्यात्व, संशयमिथ्यात्व तथा अज्ञानमिथ्यात्व; अविरतिरूप भावाश्रवना पण पांच भेद छे. जेवा के, हिंसा, मृषावाद, अदत्तादान, मैथुन तथा परिग्रह; प्रमादरूप भावाश्रवना पंदर भेद कहेला छे जेवा के चार प्रकारनी विकथा, चार क्रोधादि कषाय, इन्द्रियोना शब्दादि पांच विषयो, निद्राप्रमाद तथा दृष्टिरागप्रमाद-एकंदर ए प्रमाणे पंदर प्रमाद जाणवा. योग भावाश्रवना त्रण भेद छे-मनोयोग, वचनयोग तथा काययोग; अने क्रोधादिकषायरूप भावाश्रव पण चार प्रकारनो छे:-जेमके क्रोध, मान, माया तथा लोभ; आ सर्व भावाश्रवनाज भेद जाणवा.३०

हवे द्रव्याश्रव कहे छे:—

सूत्र—(गाथा)

णाणावरणादीणं जोगं जं पुग्गलं समासवदि ॥
द्व्वासओ स णेओ अणेयभेओ जिणक्काओ॥३१॥

अर्थः—ज्ञानावरणादि आठ प्रकारनां कर्मने योग्य जे पुदगल–एटले कार्मणशरीरनी निष्पत्तिनां कारण जे पुदगल परमाणुओ–तेओनुं जीवप्रदेशने लक्षी जे आगमन ते द्रव्याश्रव जाणवो. आ द्रव्याश्रव जिनभाषित होइने अनेक भेदवाळो जे–अर्थात् ज्ञानावरणादि कर्मरूप आठ मूळप्रकृति तथा तेना उत्तरप्रकृतिरूप १४८ भेदोने द्रव्याश्रव कहेवामां आवे छे.३१

बंध पदार्थ व्याख्यान:—

सूत्र—(गाथा)

बज्झदि कम्मं जेणदु चेदणभावेण भावबंधो सो ॥
कम्मादपदेसाणं अण्णोण्णपवेसणं इयरा ॥३२॥

अर्थः—बंध पदार्थ बे प्रकारनो छे. एक तो भावबंध तथा बीजो द्रव्यबंध, तेमांनो भावबंध ते ए छे के, चेतनभावी आत्माने राग-द्वेष–मोहरूप अशुद्ध परिणामथी जे कर्म बंधाय छे ते भावबंध कहेवाय छे; सिवाय बीजो द्रव्यबंध ते ए छे के, कर्म पुदगल तथा आत्मप्रदेशनो जे अन्योन्य प्रवेश-नीरक्षीरन्याय प्रमाणे जे एकत्र संमिलन ते द्रव्यबंध जाणवो.३२

बंधपदार्थना भेदः—

सूत्र--(गाथा)

पयडिट्ठिदि अणुभाग-प्पदेसभेदादु चउविधोबंधो ॥
जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागाकसायदोहुंति ॥

अर्थः—प्रकृतिबंध, स्थितिबंध, अनुभागबंध, तथा प्रदेशबंध-एम चार प्रकारनो बंध पदार्थ छे. तेमां प्रकृतिबंध ते ए छे के, प्रकृति-स्वभावनो जे बंध ते प्रकृतिबंध जाणवो; जेम ज्ञानावरण कर्मप्रकृतिनो पटनी पेठे ज्ञानगुण ढांकवानो स्वभाव छे, दर्शनावरण कर्मप्रकृतिनो दरवान पुरुषनी पेठे दर्शनगुण ढांकी देवानो स्वभाव छे, वेदनीय कर्मप्रकृतिनो मध चोपडेली तरवारनी पेठे सुख-दुःख उपजाववानो स्वभाव छे, मोहनीय कर्मप्रकृतिनो मदिरानी पेठे भ्रम उपजाववानो स्वभाव छे, आयुःकर्मनो हेडनी पेठे आत्माने देहसंबन्धद्वारा रोकी राखवानो स्वभाव छे, नामकर्मनो चित्रकारनी पेठे आत्माने अनेक शरीराकारे परिणामी देवानो स्वभाव छे, गोत्रकर्मनो कुंभारनी पेठे उच्च-नीच गोत्रद्वारा मोटा-नाना करी देवानो स्वभाव छे अने अंतराय कर्मनो भंडारी पुरुषनी पेठे वस्तानी प्राप्तिमां विघ्न करवानो स्वभाव छे. एम आठ प्रकारनी प्रकृतिना स्वभावनो जे बंध ते प्रकृतिबंध कहेवाय छे. स्थितिबंध ते ए छे के, जेम बकरी-गाय-भेंस वगेरेना दूधनो मधुर स्वाद बे के अढी प्रहर सुधी तेज स्थितिनां रहे छे तेम, आत्माना

प्रदेशमां कर्म पुदगलनो संबंध जेटला काळपर्यंत तेज स्थितिमां रहे छे ते 'स्थिति' कहेवाय छे अने ते स्थितिनो जे बंध ते स्थितिबन्ध कहेवाय छे; अनुभाग बन्ध ते ए छे के, जेम बकरी–गाय–भेंस–वगेरेना दूधमां तर–तमयोगे मधुरता वगेरे शक्तिनो विशेष छे तेम, जीवप्रदेशने विषे रहेलां कर्मपुदगल स्कंधनो तर–तम–योगे करी ओछां–वधतां सुख–दुःख देवानी शक्तिनो जे विशेष छे ते अनुभाग कहेवाय छे अने ते अनुभागनो जे बन्ध ते अनुभागबन्ध जाणवो. आ अनुभाग बन्धनेज बीजा नामे ' रसबन्ध ' कहेवामां आवे छे. हवे प्रदेशबन्ध एटले–एक एक जीवप्रदेशमां सिद्ध जीवना अनंतमा भागे अभव्य थकी अनंतगणा अधिक पुदगल परमाणुओ क्षणे क्षणे बन्धपणे जे परिणमे छे ते प्रदेशबन्ध कहेवाय छे. ए प्रमाणेना बन्ध पदार्थना चार भेदो पैकी प्रकृतिबन्ध तथा प्रदेशबन्ध, मन–वचन–काय–ए त्रणथी थाय छे अने स्थितिबन्ध तथा अनुभागबन्ध, कषायोना परिणामथी उद्भवे छे. ३३

संवर पदार्थ व्याख्यान:—

सूत्र—(गाथा)

चेदणपरिणामो जो कम्मस्सासवणिरोहणे हेउ ॥

सो भावसंवरो खलु दव्वासवरोहणे अण्णो ॥३४॥

अर्थः—संवर पदार्थ पण बे प्रकारनो छे. एक भावसंवर तथा बीजो द्रव्यसंवर. तेमां शुद्ध ज्ञानानन्दमय परमात्मानी

भावनाथी शुद्ध उपयोगरूप जे चेतनपरिणाम उत्पन्न थाय छे ते शुद्ध चैतन्य परिणाम कहेवाय छे. आ शुद्ध चैतन्य परिणाम, कर्मपुदगळने जीव प्रदेश समीप आवतां अटकाववामां हेतु छे—असाधारण कारण छे—एटले के शुद्ध चैतन्य परिणामना महिमाथी जीव प्रदेशनी समीपे कर्मपुदगळ आवी शकतां नथी; आवा प्रकारनो जे शुद्ध चेतन परिणाम तेने 'भावसंवर' कहेवामां आवे छे; अने आ भावसंवरद्वारा उत्पन्न थइ जे द्रव्याश्रवनो निरोध करे—कर्मपुदगलना आगमनने जे अटकावे ते बीजो द्रव्यसंवर कहेवाय छे. ३४

भावसंवरना विशेष भेद कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

वदसमिदीगुत्तीओ धम्माणुपेहापरीसहजओ य॥
चारित्तं बहुभेया णादव्वा भावसंवरविसेसा॥६४॥

अर्थः—व्रत, समिति, गुप्ति, धर्म, अनुप्रेक्षा, परीषहजय अने चारित्र इत्यादि भावसंवरना विशेष भेद जाणवा. आमानुं व्रत बे प्रकारनुं छे. एक निश्चय व्रत तथा बीजुं व्यवहार व्रत. तेमां पोताना शुद्धात्म भावनाना बळवडे रागादि अशुद्ध परिणामथी जे निवृत्ति ते निश्चयव्रत कहेवाय छे अने अहिंसादि जे पांच महाव्रत ते व्यवहार व्रत कहेवाय छे. आ व्रतरूप जे परिणाम ते भावसंवर छे; तेमज समिति पण बे

प्रकारनी छे. एक तो निश्चयसमिति तथा बीजी व्यवहार समिति. तेमां अनंतज्ञानादि विशुद्ध स्वभावनी जे प्राप्ति ते निश्चयसमिति छे अने इर्या-भाषा-एषणा-आदान-निक्षेप-आ पांच प्रकारनी व्यवहार समिति छे. आ समिति पण भावसंवर छे. वळी गुप्ति पण बे प्रकारनी छे. एक तो निश्चय गुप्ति. तथा बीजी व्यवहार गुप्ति. तेमां आत्माने सहजानंदस्वभावमां जे गोपवी राखवो ते निश्चयगुप्ति समजवी अने-मन-वचन कायने अशुभ क्रियाओथी जे गोपवी राखवां ते व्यवहार गुप्ति छे. आ गुप्ति पण भावसंवर छे. तेजप्रमाणे क्षमादि दश प्रकारनो जे उत्तम प्रतिधर्म छे ते पण भावसंवर छे. अनुप्रेक्षा-एटले अनित्यादि बार भावना. ते पण भावसंवर छे. अमुक अमुक भावनाओथी बावीस प्रकारना परीषहोनो जे जय करवो ते पण भावसंवर छे.

हवे चारित्र शब्दनो अर्थ कहेवाय छे:-शुद्धोपयोगरूप रत्नत्रयनी परिणतिनुं पोताना शुद्ध आत्मद्रव्यमां जे चरण-स्थापन करवुं तेने चारित्र कहेवामां आवे छे. आ चारित्रना तर-तमयोगे पांच भेद थाय छे. जेमके, पहेलुं सामायिक चारित्र. सामायिक चारित्र एटले 'सर्व जीव केवळ ज्ञानस्वभाव छे, कोइ पण अधिक-न्यून नथी' एवी जे समता बुद्धि ते सामायिक छे; अथवा पोताना स्वभावनी स्थिरताना बळथी समग्र शुभ-अशुभ संकल्पोनो जे समकाळे त्याग-तेवी जे परमसमाधि ते सामायिक छे; अथवा आत्माना अनुभवना

बळथी राग–द्वेषनी परिणतिनो जे सर्वथा त्याग ते सामायिक छे; अथवा सुख–दुःखना अनुभवप्रसंगे जे संपूर्ण मध्यस्थभाव ते सामायिक छे. आनुं नामज सामायिक चारित्र कहेवाय छे. बीजुं छेदोपस्थापनीय चारित्र कहेवाय छे. आ छेदोपस्थापनीय चारित्र ते ए छे के आत्मा, समग्र हिंसा–मृषा–अदत्त–मैथुन–परिग्रहथी विराम पामी पांच प्रकारना विकल्पोनो छेद–भेद करी नाखे, रागादिविकल्परूप सावद्य योगथी निवृत्ति पामे अने पोताना शुद्ध स्वरूपमां स्थिति करी निश्चळ थाय ते छेदोपस्थापनीय चारित्र कहेवाय छे; अथवा छेद एटले पोताना व्रतनुं खंडन थतां निज शुद्धात्मानुभवरूप निश्चयप्रायश्चित्तद्वारा अने निश्चयप्रायश्चित्तना साधक प्राणायाम–ध्यान–जप तपरूप व्यवहारप्रायश्चित्तद्वारा पोताना स्वरूपमां आत्माने जे स्थापित करवो, ते छेदोपस्थापनीय चारित्र कहेवाय छे. त्रीजुं 'परिहारविशुद्धि' नामनुं चारित्र छे. आ चारित्रनुं स्वरूप ए छे के, मिथ्या रागादि विकल्परूप मेळनो परिहार-परित्याग करी आत्मानी जे शुद्धि–निर्मळता ते 'परिहारविशुद्धि' चारित्र कहेवाय छे. चोथुं 'सूक्ष्म संपराय' नामनुं चारित्र छे. तेनुं स्वरूप ए छे के, प्रथम मोहनीय कर्मनी २८ प्रकृतिमांथी केवळ एक लोभ प्रकृतिविना बाकीनी २७ प्रकृतिओनो क्षय तथा उपशम थया पछी जे परिणामविशेषथी सूक्ष्म एवी लोभप्रकृतिनो पण क्षय तथा उपशम थइ जाय तेनुं नाम सूक्ष्म संपराय चारित्र कहेवाय छे. हवे पांचमुं 'यथाख्यात' चारित्र कहे छेः—

समग्र मोहनीय प्रकृतिनो क्षय-उपशम थया पछी निजगुणरूप परमस्थिरता लक्षण जे चारित्र प्रकटे छे ते यथाख्यात कहेवाय छे. ए प्रमाणे पांच प्रकारनां चारित्र कही तेओ कये गुणठाणे प्राप्त थाय छे ते हवे कहे छेः-सामायिक चारित्र अने छेदोपस्थानीय चारित्र प्रमत्त, अप्रमत्त, अपूर्वकरण तथा अनिवृत्तिकरण-ए चार गुणठाणे प्राप्त थाय छे; परिहारविशुद्धि चारित्र 'प्रमत्त' नामना छट्ठे गुणठाणे तथा 'अप्रमत्त'नामना सातमे गुणठाणे प्राप्त थाय छे; सूक्ष्मसंपराय चारित्र 'संपराय'नामना दशमे गुणठाणे प्राप्त थाय छे अने यथाख्यात चारित्र उपशांतमोह, क्षीणमोह, सयोगी केवली अने अयोगी केवली ए चार गुणठाणे प्राप्त थाय छे. विरताविरतरूप जे देशचारित्र छे तेनुं गुणठाणुं 'देशविरति' नामे पांचमुं छे अने सकलचारित्रना अभावरूप जे असंयत तेनां गुणठाणां मिथ्यात्व-सास्वादन-मिश्र-अविरत-ए चार छे. ए रीते चारित्रना भेद तथा गुणठाणां कह्यां. आ सर्व-व्रतादि-चारित्रसुधीना पदार्थोने भावसंवरना विशेष भेद जाणवा. ३५

निर्जरा पदार्थ व्याख्यानः—

सूत्र—(गाथा)

जह कालेण तवेण य भुत्तरसं कम्मपुग्गलं जेण ॥
भावेण सडदि णेया तस्सडणं चेदिणिज्जरा दुविहा॥

अर्थः—निर्जरा बे प्रकारनी छे. एक भावनिर्जरा तथा

बीजी द्रव्यनिर्जरा. तेमांथी प्रथम भावनिर्जरा कहे छेः—जे कर्म जे काळे पोताना उदयमां आवे—स्वस्वभावे उदीरणा विनाज उदयमां आवे ते 'यथाकाल' कहेवाय छे. आ यथाकालथी तथा तपथी कर्मने उदीरीने जेनो रस—सुखदुःखरूप स्वाद भोगवाइ गयो छे एवुं कर्मपुदगल, आत्माना विशुद्ध परिणामरूप जे भावथी आत्मप्रदेशमां वळगेलुं छतां तेथी छुटुं पडी जाय—सरी—खरी पडे—एवा प्रकारनो जे शुद्ध आत्मपरिणाम ते 'भावनिर्जरा' कहेवाय छे अने आत्मप्रदेशमां लागेला—वळगेला कर्मपुद्गलनुं जे सरवुं—खरवुं तेने 'द्रव्यनिर्जरा' कहेवामां आवे छे.

अहीं निर्जराना संबंधमां विशेष समजुती आ प्रमाणे छेः—निर्जरा बे प्रकारनी छे. एक सविपाक निर्जरा अने बीजी अविपाक निर्जरा. जेम पोताना समयने पामी आंबानुं फळ परिपक्व थाय छे तेम कर्म पण पोतानी मेळे पोताना समये उदय पामी निर्जरे—परिपाक दशाने पामे ते सविपाक निर्जरा कहेवाय छे; अने जेनो परिपाक अमुक काळांतरे होय छे तेवा आंबाना फळने अमुक कोइ उपायथी तत्काळ समयविना जेम पकववामां आवे छे तेम, कर्मपुद्गलने पण तेना उदय काळविना—परिपाकसमय विना जे महाघोर तपथी उदीरीने—उदयकाळमां आणीने जे कर्मनिर्जरा करवी—कर्मोने खपाववां ते अविपाक निर्जरा कहेवाय छे. ए रीते सकाम निर्जराद्वारा तथा अकामनिर्जराद्वारा जेनो फळभोग भोगवायो होय छे तेवां कर्म-

पुदगलो विशुद्ध परिणामथी जे सरे–पडे–खपे ते भावनिर्जरा जाणवी; अने ते सिवायनी उपर कही छे ते द्रव्यनिर्जरा समजवी.

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, संवरपूर्वक ज्ञानवाळानी जे निर्जरा कहेवामां आवी ते सविपाक निर्जरा तो मिथ्यादृष्टिने पण होइ शके छे; केवळ सम्यग्दृष्टिनेज होय एवो कंइ नियम नथी; तो ते ज्ञानवाननी निर्जरा केम कही शकाय? आ प्रश्नतो उत्तर ए छे के, मिथ्यात्वीने जो के सविपाक निर्जरा होय छे खरी पण ते तेने संवरपूर्वक निर्जरा होती नथी. अहीं तो संवरपूर्वक लीधी छे अने ते संवर केवळ ज्ञानीनेज होय छे, अज्ञानीने होय नहि; माटे अज्ञानी जीवनी निर्जरा गजस्नाननी माफक निरर्थक छे. केमके अज्ञानीने अल्प निर्जरा घणा बंधे होय तेथी तेनी गणना न करी शकाय. ३६

मोक्षपदार्थ व्याख्यान:—

सूत्र—(गाथा)

सव्वस्स कम्मणो जो खयहेऊ अप्पणो हुपरिणामो॥
णेओ स भावमुक्खो दव्वविमुक्खोप्पकम्मपुहभावो॥

अर्थः——मोक्ष पदार्थना बे भेद छे. एक भावमोक्ष अने बीजो द्रव्यमोक्ष. तेमांनो भावमोक्ष ते ए छे के, समग्र कर्मोनो जे क्षय–मूळथी विनाश तेनुं असाधारण कारण एवुं जे आ-आत्मानुं परिणाम तेने भावमोक्ष जाणवो; अने द्रव्यमोक्ष ते

ए छे के, आत्मानो तथा कर्मोनो जे पृथग भाव-अलग अलग थइ जवुं-ते द्रव्यमोक्ष छे. आ द्रव्यमोक्ष चौदमा गुणठाणाने अंते होइ शके छे. ३७

पुण्य-पाप-पदार्थ व्याख्यानः—

सूत्र--(गाथा)

सुहअसुहभावजुत्ता पुण्णं पापं हवंति खलु जीवा ॥
सादं सुहाओ णामं गोदं पुण्णं पराणि पावं च ॥३८॥

अर्थः—देवपूजा-गुरुपूजा-यतिपूजा-सुपात्रे दान-सुशीलता-उपवास वगेरे शुभ भावोमां जे रुचि ते पुण्य छे अने ते रुचिवाळो जे जीव ते पुण्यवान छे; तेमज विषय-कषायादि जे विपरीत भावो तेमां जे रुचि ते पाप छे अने ते रुचिवाळो जे जीव ते पापयुक्त छे. कहेवानो भाव ए छे के, शुभभावयुक्त जे जीव ते पुण्यवान छे अने अशुभभाववाळो जे जीव ते पापी छे. आ पुण्य-पाप पदार्थनुं विशेष स्वरूप ए छे के, सातावेदनी-देवमनुष्यादि शुभ आयुष-शुभ नाम कर्मनी जे प्रकृति-शुभ गोत्र-उच्चैर्गोत्र-वगेरे ४२ प्रकृति, ते पुण्य पदार्थ कहेवाय छे अने बीजी एथी विपरीत एवी जे ८२ प्रकृति ते पाप पदार्थ छे.

हवे अहीं एक प्रश्न थाय छे के, सम्यग्दृष्टि जीवने पुण्य तथा पाप-ए बे पदार्थ स्कंधरूप शुद्ध स्वरूपना घातक होवाथी अवश्य हेयज छे उपादेय तो नथीज; तो पछी सम्यग्दृष्टि जीव अरिहंतादिनी भक्ति वगेरे विशेष पुण्य क्रियाओ शा

माटे करे? आ प्रश्नना उत्तरमां कहे छे के, जेम कोइ भोगी पुरुष परदेश गयो होय त्यारे पोतानी प्रेमपात्र मनोहर पत्नीना वियोगथी क्षीण थइ जाय छे अने ते स्त्रीनुं नित्य स्मरण कर्या करे छे; वळी कोइ समये ते स्त्री पासेथी समाचार लावनार कोइ माणस पोतानी पासे आवे छे त्यारे ते स्त्रीना कारणथीज आवनार माणसनो घणो घणो आदर-सत्कार करे छे; तेज प्रमाणे सम्यग्दृष्टि जीव पण परम सम्यक्त्वने प्राप्त करी ते सम्यक्त्वना महिमाद्वारा शुद्धात्मस्वरूपनो आस्वाद ले छे-केवळ परोक्षभावेज शुद्धात्मभावनी भावना भावे छे पण चारित्र मोहना उदयथी निर्विकार स्वरुपने प्रत्यक्षपणे पामी शकतो नथी; माटेज निर्दोष-निर्विकार परमात्मा-अरिहंतादि परमेष्ठिनी ते भक्ति करे छे अने शुद्ध आत्मस्वरूपनी प्राप्ति तरफ लक्ष्य राखी, विषय-कषायादि अशुभ भावोने दूर करी परमेष्ठिनी भक्ति वगेरे शुभ सामग्रीद्वारा प्रत्यक्ष निर्विकार स्वरूपने अनुभवे छे. आ रीते तीर्थंकरादिनी भक्तिरूप जे विशिष्ट गुण छे ते तीर्थंकरप्रकृति प्रमुख पुण्यपरंपराथी मुक्तिनुं कारण बने छे अने तेथीज सम्यग्दृष्टि जीवने व्यवहारनये तेवुं धर्मानुबन्धी पुण्य उपादेय छे; पण मिथ्यात्वीनुं जे पुण्य होय छे ते पापानुबन्धी छे अने तेवा पुण्यद्वारा परिणामे केवळ पापनीज उत्पत्ति छे माटे मिथ्यात्वीनुं ते पुण्य सर्वथा हेय छे.

इतिश्री द्रव्यसंग्रह ग्रंथमां सप्तपदार्थ-नवतत्व-प्रतिपादक बीजो अध्याय समाप्त.

मोक्षमार्ग कथनः—

सूत्र—(गाथा)

सम्मद्दंसणणाणं चरणं मोक्खस्स कारणं जाण॥
ववहारा णिच्छयदो तत्तियमइओ णिओ अप्पा॥३९

अर्थः—सम्यग्दर्शन एटले शुद्ध श्रद्धा, सम्यगज्ञान एटले संशयादिरहित यथार्थ ज्ञान अने सम्यक्‌चारित्र एटले शुद्ध वीतराग चारित्र–आ त्रणे रत्नो मोक्षनां कारण जाणवां पण याद राखवुं जोइए के, आ मोक्षकारणो व्यवहारदृष्टिएज छे; निश्चयदृष्टिए तो ज्ञान–दर्शन–चारित्रमय एवो आत्माज मोक्षनुं कारण छे. ३९

हवे ज्ञान–दर्शन–चारित्र ए गुणो अने आत्मद्रव्यनो परस्पर व्याप्यव्यापकभाव सम्बन्ध तथा ज्ञान–दर्शन–चारित्रगुणमय एवा आत्मद्रव्यनी उपादेयता कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

रयणत्तयं ण वट्टइ अप्पाणं मुइत्तु अण्णदव्वंमि॥
तम्हा तत्तियमइओ हंदि हु मोक्खस्स कारणं आदा॥

अर्थः—दर्शन, ज्ञान अने चारित्र ए त्रण गुण–रत्नो आत्मद्रव्यने मुकीने अचेतन अन्य पुदगलादि द्रव्योमां कदी रहेतां नथी. अर्थात् ज्ञानादि गुणो आत्मद्रव्य विना बीजे कदी रहेता नथी; तेमज आत्मा पोते पण ए ज्ञानादि गुणो विना कदी रहेतो नथी तेथी आत्मानो अने ज्ञानादि गुण-

समूहनो व्याप्य–व्यापकभावसंबंध सिद्ध थाय छे. जेम अग्निनो तथा उष्णतानो व्याप्य–व्यापकभाव संबंध छे तेम आत्मानो तथा ज्ञानादि गुणोनो व्याप्य–व्यापकभाव संबंध जाणवो; आ रीते ज्ञानादि गुणो तथा आत्मानो परस्पर अभेद छे तेथी आत्मा ज मोक्षनुं कारण छे अने तेज उपादेय छे. ४०

मोक्षनां कारण सम्यक्त्वादि गुणोनुं स्वरूपकथनः—

सूत्र—(गाथा)

जीवादीसद्दहणं सम्मत्तं रूवमप्पणो तं तु॥
दुरभिणिवेसविमुक्कं णाणं सम्मं खु होदि सदिजम्हि॥

अर्थः—सर्वज्ञ वीतरागदेवे कहेला जीवादि समग्र पदार्थो विषे चलबुद्धि–मलिनबुद्धिरहित एवी जे शुद्ध श्रद्धा धारण करवी–एटले 'वीतरागे कहेला समग्र जीवादि पदार्थो कदी असत्य नज होय' आवी जे निश्चयबुद्धि तेज 'सम्यक्त्व' छे. आ सम्यक्त्व आत्मानुंज स्वरूप छे–आत्मानोज शुद्ध गुण छे–आत्मानुंज परिणाम छे. वळी आ सम्यक्त्व गुणनुं फळ एवुं महान छे के, संशय–विमोह–विभ्रम वगेरे ज्ञानना दोषो रूप दुष्ट अभिनिवेशथी रहित एवुं जे सम्यग्ज्ञान यथार्थ विशुद्ध ज्ञान ते केवळ आ सम्यक्त्वना महिमाथी ज प्राप्त थाय छे. जेम गौतम, अग्निभूति तथा वायुभूति नामना त्रण ब्राह्मणो, जेओ पांचसो पांचसो शिष्योना उपाध्याय हता अने चार वेद, ज्योतिष–व्याकरण वगेरे वेदनां छ अंगो, मनु वगेरे

अढार स्मृतिओ, पुराणो, महाभारतादि इतिहासो तथा मीमांसा न्याय वगेरे समग्र शास्त्रोने जाणनारा हता छतां प्रथम सम्यक्त्वना अभावे अज्ञानीज हता–मिथ्या ज्ञानीज हता, नहि के सम्यग्ज्ञानी ! परंतु ज्यारे ते ब्राह्मणो श्रीवर्धमान स्वामीने दर्शने गया अने तेमनां दर्शनमात्रथी ज तेओनो मिथ्यात्व अंधकार दूर थयो तथा सम्यक्त्वगुण तेओने प्राप्त थयो त्यारे–तेज क्षणे तेओनुं पूर्वकाळनुं मिथ्याज्ञानज सम्यग्ज्ञानरूपे परिणम्युं. आवो सम्यक्त्वनो महिमा छे. आ सम्यक्त्व विना अगीआर अंगोने जाणनारो हरकोइ मनुष्य खरेखर मिथ्याज्ञानीज छे. वळी जेम सम्यक्त्वना महिमाथी मिथ्याज्ञान सम्यग्ज्ञान थइ शके छे तेम, तपश्चरण–व्रत–ध्यानादिक पण मिथ्यारूप होवा छतां सम्यक्त्वना महिमाथी शुद्ध स्वरूप थइ शके छे. जेम विषमिश्र दूध सर्वथा हेय छे तेम सम्यक्त्व विना सर्व क्रियाकलाप मिथ्यास्वरूप छे, हेय छे; माटे भव्य जीवे पचीस प्रकारना मळथी रहित एवो सम्यक्त्व गुण अवश्य उपादेय स्वरूपे जाणवो जोइए. सम्यक्त्वना पचीस दोषो आ प्रमाणे कहेवामां आव्या छेः–

"मूढत्रयं मदाश्चाष्टौ तथानायतनानि षट् ॥
अष्टौ शंकादयश्चेति दृग्दोषाःपंचविंशतिः ॥१॥

त्रण प्रकारना मूढ, आठ प्रकारना मद, छ अनायतन अने शंका वगेरे आठ–आ पचीस सम्यक्त्वना दोषो छे. तेमां

त्रण मूढ आ प्रमाणे छेः—देवमूढ, लोकमूढ तथा शास्त्रमूढ. जे सम्यक्त्वी जीव क्षेत्रपालादिनो महिमा जोइ पुत्रादि निमित्ते ते मिथ्यादेवनुं आराधन करे ते देवमूढ छे; गंगादि तीर्थमां स्नानादि कर्तव्यने पुण्यनुं कारण मानी जे करे ते लोकमूढ छे; अने अज्ञानी मनुष्ये मानवा योग्य एवा ज्योतिष्क-मंत्र-वादादि जोइने जैन शास्त्रनो त्याग करी कुदेवभाषित शास्त्रोनो स्वीकार-भक्ति-आदर करे ते शास्त्रमूढ कहेवाय छे. आठ प्रकारना मद तो प्रसिद्ध छे. छ अनायतन आ प्रमाणे छेः—मिथ्यादेव, मिथ्या देवनो आराधक, मिथ्यातप, मिथ्यातपस्वी, मिथ्याशास्त्र अने मिथ्याशास्त्रपाठी—आ छनी जे प्रशंसा ते छ प्रकारनां अनायतन कहेवाय छे. शंकादि आठ दोषो तो प्रसिद्ध ज छे. सम्यक्त्वना आ पचीस मेल सम्यक्त्वने मलिन करे छे माटे सम्यग्दृष्टिए ते मेलनो त्याग करवो. ४१

सम्यग्ज्ञान स्वरूप कथनः—

सूत्र—(गाथा)

संसयविमोहविब्भमविवज्जिअं अप्पसरूवस्स ॥
गहणं सम्मण्णाणं सायारमणेयभेयं च ॥४२॥

अर्थः—संशय, विमोह अने विभ्रमथी रहित एवुं आत्मस्वरूपनुं जे ग्रहण-ज्ञान ते सम्यग्ज्ञान छे. जैन शास्त्रमां जीवादि पदार्थो कहेवामां आव्या छे ते सत्य हशे के असत्य? एवी जे अनिश्चित बुद्धि ते 'संशय' जाणवो. परस्पर सापेक्ष-

एक एकनी अपेक्षा राखनार एवा जे बे नय ते द्वारा द्रव्य-गुण-पर्याय–नित्य–अनित्य–स्याद्वादरूप स्वरूप सांभळी विशेष ज्ञानना अभावने लीधे जे मूढबुद्धि थाय छे ते 'विमोह' कहेवाय छे अने छीपना टुकडामां जेम रूपानी निश्चय बुद्धि थाय छे तेम, अनेकांत वस्तुमां एकांत बुद्धि एटले नित्यादि अनंत धर्मात्मिक वस्तुमां एकांत क्षणविनाशीत्वरूप जे मिथ्या निश्चय बुद्धि ते विभ्रम कहेवाय छे. आ संशय–विमोह–विभ्रमरूप मिथ्याज्ञानथी रहित जे आत्मस्वरूपनुं ज्ञान ते सम्यग्ज्ञान कहेवाय छे. आ सम्यग्ज्ञान साकार छे–सविकल्प छे. जो के ज्ञान वस्तु निराकार छे–निर्विकल्प छे तो पण ज्ञान, ज्ञेयना आकाररूपे परिणमतुं होवाथी अने सकल ज्ञेय वस्तुगत गुण पर्यायादि सहित जणातुं होवाथी ज्ञान साकार छे; तेमज आ सम्यग्ज्ञानना मतिज्ञान वगेरे अनेक भेदो कहेवामां आव्या छे. ४२

सम्यगदर्शन स्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

जं सामन्नं गहणं भावाणं णेव कट्टुमायारं ॥
अविसेसिऊण अट्ठे दंसणमिदि भणए समए ॥४३॥

अर्थः—वस्तुगत गुण–पर्यायरूप विकल्प–आकार कर्या विना एटले गुण पर्यायादि विकल्प रहित केवळ शुद्ध सत्तामात्रे सर्व पदार्थोनुं जे सामान्य ग्रहण–सामान्य ज्ञान तेने सिद्धांतमां

દર્શન કહેવામાં આવે છે. આ દર્શન, પદાર્થ માત્રને અવિશેષ સ્વરૂપે ગ્રહણ કરે છે–એટલે કોઇ પણ જ્ઞેય વસ્તુના શ્વેતાદિ ગુણ કે ઘટ–પટાદિ આકૃતિરૂપ જે પર્યાય–વિશેષ તે વિનાજ સામાન્ય સ્વરૂપે જ્ઞેયને ગ્રહણ કરે છે માટે તે નિરાકાર કહેવાય છે. અર્થાત્ સમ્યગ્જ્ઞાન તે સાકાર છે અને સમ્યગ્દર્શન તે નિરાકાર છે. સારાંશ કે, નિર્વિકલ્પક–નિરાકારસ્વરૂપ જે વસ્તુદર્શન તે દર્શન છે અને સવિકલ્પ–ગુણપર્યાયાદિ સહિત જે વસ્તુગ્રહણ તે જ્ઞાન છે. ૪૩

હવે છદ્મસ્થને પ્રથમ દર્શન અને તે પછી જ્ઞાન થાય છે; પણ કેવલીને દર્શનોપયોગ તથા જ્ઞાનોપયોગ બન્ને સમકાલે એકી સાથે થાય છે આવા આશયથી કહે છેઃ—

સૂત્ર—(ગાથા)

दंसणपुव्वं णाणं छद्मत्थाणं ण दोण्णि उवओगा ॥
जुगवं जम्हा केवलि–णाहे जुगवं तु ते दोवि ॥४४॥

અર્થઃ—છદ્મસ્થ જીવ, નેત્રાદિ ઇન્દ્રિયોદ્વારા પ્રથમ વસ્તુને દેખે છે અને પછી તે વસ્તુને જાણે છે. માટેજ છદ્મસ્થને દર્શનોપયોગ તથા જ્ઞાનોપયોગ–બન્ને સાથે કદી હોઇ શકે નહિ, પણ પ્રથમ દર્શન અને પછી જ્ઞાન થાય છે. જ્ઞાનાવરણ તથા દર્શનાવરણથી જે યુક્ત હોય છે તે છદ્મસ્થ કહેવાય છે. તે છદ્મસ્થને જ્ઞાન તથા દર્શન ક્ષાયોપશમિક છે. ક્ષાયોપશમિક એટલે આવરણના કંઇક ક્ષય પછી બીજા જીવ-

प्रदेशने संबंध पामे अने आवरणरूप पुद्‌गलना उपशमथी किंचित्‌मात्र ज्ञानदर्शन गुणनुं मेघमंडळथी आवरित सूर्यप्रभानी पेठे जे बहार नीकळवुं ते. पण आवरणना सर्वथा समूळ क्षयथी ज्ञानदर्शननी जे स्वाधीनता ते क्षायिक कहेवाय छे. आ क्षायिक ज्ञानदर्शनना अभावथी छद्मस्थने वस्तुनुं दर्शन तथा वस्तुनुं ज्ञान एकी साथे थतां नथी पण अनुक्रमे थाय छे; त्यारे केवलीनाथ–केवळ ज्ञानीने ते दर्शनोपयोग तथा ज्ञानोपयोग बन्ने एकी साथे होय छे. केमके केवलीनां ज्ञानदर्शन क्षायिक छे अने तेथीज तेमने ज्ञान तथा दर्शन समकाळे होय छे. ४४

हवे शुद्धोपयोगरूप वीतराग चारित्रनुं परंपराए साधक सरागचारित्र कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

असुहादो विणिवित्ती सुहे पवित्ती य जाण चारित्तं ॥
वदसमिदिगुत्तिरूवं ववहारणया दु जिणभणियं ॥४५

अर्थः—-अशुभ विषयक कषाय–दुश्चेष्टारूप अशुभ उपयोगथी निवृत्त थवुं–दूर रहेवुं–अटकवुं अने शुभ उपयोगरूप सराग चारित्रमां जे प्रवृत्ति करवी–उपादेय बुद्धि करवी तेने चारित्र जाणवुं. व्यवहार नये देशव्रत, सर्वव्रत, पांच समिती अने त्रण गुप्ति–ते आ चारित्रनुं स्वरूप छे अने ते जिन भगवाने कहेलुं छे. ४५

सरागचारित्रसाध्य वीतराग चारित्रनुं स्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

बहिरब्भिंतर किरियारोहो भवकारणप्पणासट्ठं ॥
णाणिस्सजं जिणुत्तं तं परमं शुद्धचारित्तं ॥४६॥

अर्थः—संसारनां कारणरूप विभाव परिणाम राग-द्वेष मोहनो विनाश करवा माटे शुभाशुभ कायव्यापार तथा शुभाशुभ वचनव्यापाररूप बाह्य क्रियानो अने मनोविकल्परूप आभ्यंतर क्रियानो जे रोध-संयम ते जिनभाषित वीतराग चारित्र छे. आ चारित्रनेज शुद्धोपयोगरूप सम्यक्‌चारित्र कहे छे. ४६

ए रीते छ गाथाओथी रत्नत्रयरूप मोक्षमार्ग कह्यो;
हवे बार गाथाओथी ध्याता, ध्यान तथा ध्येयनुं
स्वरूप कहे छे. तेमां प्रथम ध्यानफलकथनः—

सूत्र—(गाथा)

दुविहं विमुक्खहेउं झाणे पाऊणदि जं मुणी णियमा॥
तम्हा पयत्तचित्ता जूयं झाणं समज्झसह ॥४७॥

अर्थः—व्यवहार तथा निश्चय-ए बन्ने प्रकारे मोक्षनुं कारण एवा रत्नत्रयने मुनि, पोताना ध्यानबळथी अवश्य प्राप्त करी शके छे; माटे हे भव्य जीवो? मनने एकाग्र करी-वश करी, तमे ध्याननो अभ्यास करो. ४७

ध्याताનું લક્ષણ:—

सूत्र—(गाथा)

मा मुज्झह मा रज्झह मा दूसह इट्ठणिट्ठ अत्थेसुं ॥
थिरमिच्छह जइ चित्तं विचित्त झाणप्पसिद्धीए ॥४८

અર્થ:—જો તમારે વિચિત્ર—અનેક પ્રકારના ધ્યાનની સિદ્ધિ પ્રાપ્ત કરવી હોય—મનને ધ્યાનનિષ્ઠ કરવું હોય અને સર્વ પ્રકારે મનને સ્થિર કરવું હોય તો કોઇ પણ ઇષ્ટ—અનિષ્ઠ અર્થો-વિષયોમાં તમે મોહ ન કરો, રાગ ન કરો અને દ્વેષ ન કરો. ભાવ એ છે કે, ઇષ્ટ કે અનિષ્ટ કોઇ પણ વિષયમાં મોહબુદ્ધિ એટલે ભ્રાંતિભાવનો ત્યાગ કરવો જોઇએ, રાગબુદ્ધિ એટલે ઉપા-દેય બુદ્ધિનો ત્યાગ કરવો જોઇએ તથા દ્વેષબુદ્ધિ એટલે હેય-બુદ્ધિનો પણ ત્યાગ કરવો જોઇએ; અર્થાત્ ધ્યાતા પુરુષે ઇષ્ટ અનિષ્ટ વસ્તુ તરફ રાગ—મોહ—દ્વેષનો ત્યાગ કરી કેવળ ઉદા-સીન રહેવું જોઇએ, જેથી મન સ્થિર થાય છે અને તે દ્વારા ધ્યાનની સિદ્ધિ થતાં પરમ નિર્વિકલ્પ સમાધિનું સુખ પ્રાપ્ત થાય છે. ૪૮

પદસ્થ-પિંડસ્થ-રૂપસ્થ-સ્વરૂપાતીત-એ ચાર પ્રકારનાં ધ્યાનનું સ્વરૂપ કહે છે; તેમાં પ્રથમ પદસ્થ ધ્યાન:—

सूत्र—(गाथा)

पणतीससोलछप्पण-चउदुगमेगं च जवह ज्झाएह॥
परमेट्ठिवाचयाणं अण्णं च गुरूवएसेणं ॥४९॥

अर्थः—'नमो अरिहंताणं' थी 'सव्वसाहूणं' त्यां सुधीनो पांत्रीस अक्षरनो जाप, 'नमोऽर्हत्सिद्धाचार्योपाध्यायसर्वसाधुभ्यः' ए सोळ अक्षरनो जाप, 'अरिहंतसिद्ध' ए छ अक्षरनो जाप, 'असिआउसा' ए पांच अक्षरनो जाप, 'अरिहंत' ए चार अक्षरनो जाप, 'सिद्ध' ए बे अक्षरनो जाप तथा 'ॐ' ए एक अक्षरनो जाप—आ सर्व परमेष्ठिनांज वाचक पद छे माटे हे आत्मन्! एमांनुं कोइपण पद लइ तुं पदस्थ ध्यान कर; अथवा बीजुं जे कंइ गुरुना उपदेशथी तने प्राप्त थाय ते सर्व परमेष्ठिवाचक पदोनुं यथाविधि तुं ध्यान कर. ४९

अरिहंतादि पंच परमेष्ठिनुं ध्यान करवा योग्य स्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

णट्ठचउघाइकम्मो दंसणसुहणाणवीरियमओ य॥
सुहदेहत्थो अप्पा सुद्धो अरिहो विचिंतेज्जो ॥५०॥

अर्थः—जेनां चार प्रकारनां घातिकर्मो मूळथी नाश पाम्यां छे अने ते घातिकर्मना क्षयथी अनंतदर्शन, अनंतसुख, अनंतज्ञान तथा अनंत वीर्यमयपणाने जे पामेल छे ते शुभ देह-औदारिक शरीरमां रहेलो अरिहंत आत्मा शुद्ध छे–निष्कलंक छे; अर्थात् क्षुधा–तृषा–भय–राग–द्वेष–मोह-चिंता-हास्य-रोग-मृत्यु–शोक–खेद–मद–अरति–विस्मय–जन्म–निद्रा–विषाद–ए अढार दोषोथी रहित छे. आ शुद्ध अरिहंत परमात्मानुं ध्यान करवुं. ५०

सिद्ध परमेष्ठिनुं ध्येय स्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

णट्ठकम्मदेहो लोयालोयस्स जाणओ दट्ठा ॥
पुरिसायारो अप्पा सिद्धो झाएह लोयसिहरत्थो ॥५१

अर्थः—विभावपरिणति एवां भाव कर्मरूप कारणना अभावथी जेनां ज्ञानावरणादि आठ कर्मो तथा औदारिक शरीरादि रूपकर्मो नाश पाम्यां छे ते सिद्धरूप आत्मानुं ध्यान करवुं, भाव ए छे के, शुद्धोपयोगना महिमाथी आठ कर्मो तथा शरीरनी उपाधिथी रहित एवुं अतींद्रिय ज्ञानसुख प्राप्त थाय छे. वळी ते सिद्धात्मा लोकालोकरूप समग्र ज्ञेय वस्तुने पोतानी ज्ञानशक्तिथी जाणी शके छे, दर्शनशक्तिथी सर्वनो द्रष्टा—दर्शन करनार बने छे, अने पुरुष आकृतिए परिणमे छे. जो के निश्चय दृष्टिए सिद्धात्मा अमूर्त्त छे—निराकार छे—निरंजन छे तो पण व्यवहारदृष्टिए चरम शरीरथी कंइक ओछो पुरुषाकारे परिणमे छे. आ सिद्धात्मा, लोकशिखर—सिद्ध शिलानी उपर एक योजनना चोवीसमा भागमां लोकनी अंते स्थिति करी रह्यो छे. ५१

आचार्य-परमेष्ठिनुं ध्येय स्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

दंसणणाणप्पहाणे वीरियचारित्तवरतवायारे ॥
अप्पं परं च झुंजइ सो आयरिओ मुणीज्झेओ॥५२॥

अर्थः—जे आचार्य निःशंकितादि आठ प्रकारना दर्शनाचारमां, कालाध्ययनादि आठ प्रकारना ज्ञानाचारमां, मनोगुप्त्यादि शक्ति विशेषरूप त्रण वीर्याचारमां, त्रण गुप्ति तथा पांच समितिरूप आठ प्रकारना चारित्राचारमां अने अनशनादि छ प्रकारना बाह्य तपाचारमां तथा प्रायश्चित्तादि छ आभ्यंतर तपाचारमां—एम पांच प्रकारना आचारमां पोताने तथा बीजाने योजे छे—पोते शुद्ध स्वरूपे पांचे आचारोनुं पालन करे छे, तथा बीजाने पळावे छे तेवा आचार्य परमेष्ठिनुं ध्यान करवुं. ५२

उपाध्याय परमेष्ठिनुं ध्येयस्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

जो रयणत्तयजुत्तो णिच्चं धम्मोवदेसणे णिरदो ॥
सो उज्झाओ अप्पा जदिवरवसहो णमो तस्स ॥५३॥

अर्थः—जे उपाध्यायरूप आत्मा, ज्ञान—दर्शन—चारित्र ए त्रण रत्नोथी युक्त छे, षड् द्रव्य—पंचास्तिकाय—सप्ततत्व—नव पदार्थरूप धर्मनो उपदेश करवामां नित्य आसक्त छे अथवा 'केवळ आत्मा उपादेय छे अन्य सर्व हेय छे' इत्यादि निश्चय धर्मनो नित्य उपदेश करे छे अथवा क्षमादि दश प्रकारना यति धर्मनो तथा दर्शनविशुद्धि आदि ११ प्रतिमारूप गृहस्थ धर्मनो व्यवहारथी उपादेय स्वरूपे नित्य उपदेश करे छे अने पंचेन्द्रियने जितनारा सर्व श्रेष्ठ यतिओ—साधुओमां श्रेष्ठ छे ते

उपाध्याय आत्माने नमस्कार; अर्थात् आवा प्रकारना उपाध्यायनुं ध्यान करवुं ५३

साधु परमेष्ठिनुं ध्येयस्वरूपः—

सूत्र—(गाथा)

दंसणणाणसमग्गं मग्गं मोक्खस्स जो हु चारित्तं ॥
साधयदि णिच्चसुद्धं साहू स मुणी णमो तस्स ॥५४॥

अर्थः—तत्वने जाणनार जे साधु, सम्यग्दर्शन तथा सम्यग्ज्ञानसहित एवुं अने मोक्षना मार्गरूप एवुं शुद्ध चारित्र नित्य साधे छे तेमने नमस्कार हो. आवा चारित्र्यनिष्ट साधु ध्यान करवा योग्य छे. ५४

ए रीते पंच परमेष्ठिनां व्यवहार दृष्टिए ध्येयस्वरूप कह्यां, हवे निश्चयदृष्टिए ध्यान कहेवामां आवे छेः—

सूत्र—(गाथा)

जं किंचि विचिंतितंतो णिरीहवित्ती हवेजदा साहू ॥
लद्धूणय एयत्तं तदा हुतं तस्स णिच्छयं झाणं ॥५५॥

अर्थः—ज्यारे कोइ ध्याता साधु, हरकोइ पदार्थने केवळ शुद्धात्मास्वरूप चिंतवे छे–ध्यावे छे अने निरीहवृत्ति बने छे–समग्र वांछा–विकल्पथी रहित होइ–समग्र बाह्य आभ्यंतर ग्रंथिओथी मुक्त थाय छे–केवळ उदासीन स्वरूप बनी रहे छे; तेमज परम एकत्व भाव–अद्वैतभावने पामी द्विधा भावथी रहित थइ निर्विकार स्वरूप थाय छे त्यारे ते मुनी-

श्वरने निर्विकल्प समाधि सुखना समुद्रसमान निश्चय ध्यान थयुं छे एम समजवुं; अर्थात् निर्विकल्प सामाधिरूप परम समाधिना परम सुखमां जे निमग्नता ते निश्चय ध्यान छे. ५५

शुभाशुभ मन-वचन-कायाना व्यापारनो निरोध करवाथी आत्माने विशुध्ध परिणतिमां स्थिरता प्राप्त थाय छे अने ते द्वाराज ध्याता पुरुषने निश्चयध्यान प्रकटे छे, एवा आशयथी कहे छेः—

सूत्र—(गाथा)

मा चिट्ठह मा जंपह मा चिंतह किंपि जेण होइ थिरो॥
अप्पा अप्पंमि रओ इणमेव परं हवे झाणं ॥५६॥

अर्थः—हे आत्मन्! शुभाशुभ चेष्टारूप कायव्यापारमां तुं स्थिति न कर. हे भव्य जीव! शुभाशुभ अंतर्जल्प तथा बहिर्जल्परूप वचन व्यापारने तुं न कर अने शुभाशुभ विकल्परूप मनोव्यापारने पण तुं न कर; जेथी—एटले शुभाशुभ कायव्यापार, वचनव्यापार तथा मनोव्यापारना परित्यागथी परमस्थिर भावने तुं पामी शकीश-निश्चळ परिणामरूप समाधिसुखना अनुभवने अनुभवी शकीश. केमके मन—वचन—कायाना व्यापारनो निरोध करवाथी आत्मा, पोताना शुद्धात्मस्वरूपमां रमण करे छे—मग्न बने छे. शुद्धात्मस्वरूपमां जे आ लीनता तेज परम निर्विकार एवुं निश्चय ध्यान छे एम समजवुं. ५६

हवे ध्याता पुरुषने तप-श्रुत-व्रतरूप ध्यान सामग्रीनो व्यवहार अवश्य उपादेय छे, ए वातने दृढ करे छेः-

सूत्र--(गाथा)

तवसुदवदवं चेदा झाणरहधुरंधरो हवे जम्हा ॥
तम्हा तत्तिदयरदा तल्लद्धीए सदा होइ ॥५७॥

अर्थः—हरकोइ आत्मा, बाह्य आभ्यंतर भेदथी बार प्रकारना व्यवहार तपवडे तथा ए व्यवहार तपथी साध्य इच्छानिरोधरूप निश्चय तपवडे जो युक्त होय छे, तेमज आचारांग आदि द्रव्य श्रुतथी तथा आत्मज्ञानरूप भाव श्रुतथी जो युक्त होय छे अने पंचमहाव्रतादि द्रव्यव्रतथी तथा भाव व्रतथी जो युक्त होय छे तोज ध्यानरूप रथनी धुरा वहेवाने समर्थ थइ शके छे-तोज ध्यानमां एकाग्र तथा एकनिष्ठ थइ शके छे; माटे ए ध्याननी लब्धि-प्राप्ति माटे सदा सर्वकाळ तप, श्रुत तथा व्रतमांज आसक्त रहेवुं जोइए; भाव ए छे के जो शुद्ध ध्यानसंपादन करवानी अभिलाषा होय तो तप-श्रुत-व्रत ए त्रणमां तल्लीन थवुं जोइशे-ते तरफ संपूर्ण प्रेम करवो जोइशे-ए त्रणेने उपादेय तरीके अवश्य स्वीकारवां पडशेज. दाखला तरीके, भरत चक्रवर्ती महाराजा फक्त बे घडीमांज मोक्षे गया ए प्रभाव पण विषयकषायनिवृत्तिरूप क्षणमात्रस्थायी व्रतनोज. तेमणे व्रतपरिणाम ग्रहण करी जिनदीक्षा स्वीकारीने लोच कर्यो के तुरतज मुक्तिपद प्राप्त थयुं, आवो

तप–श्रुत–व्रतनो महिमा छे. माटे ध्याता पुरुषे ध्यानसामग्री तरीके तप, श्रुत तथा व्रतनो अवश्य स्वीकार करवो. ५७

छेवटे ग्रंथकर्ता पोतानी लघुता–निरभिमानिता दर्शावे छेः—

सूत्र—(गाथा)

दव्वसंगहमिणं मुणिणाहा॥
दोससंसयचुदा सुयपुण्णा ॥
सोधयंतु तणुसुत्तधरेण ॥
णेमिचंदमुणिणा भणियं जं ॥५८॥

अर्थः-जे आ द्रव्यसंग्रह ग्रंथ, अल्प श्रुतधर अल्प मात्र श्रुतने धारण करनारा मुनि नेमिचंद्रे कह्यो छे–रच्यो छे तेने राग–द्वेष–मोह–ए दोषोथी तथा संशयादि मिथ्या ज्ञानथी रहित एवा श्रुतपूर्ण–श्रुतज्ञान पूर्ण मुनिनाथो–मुनीश्वरो शोधी लेजो–आ ग्रन्थमां जे कोइस्थळे विरुद्ध शब्द के विरुद्ध शब्दार्थ मूकी देवायो होय ते बदल योग्य शब्द के योग्य शब्दार्थ मूकीने सुधारी लेजो. ५८

इति श्री द्रव्यसंग्रह ग्रंथमां "मोक्षमार्ग प्रतिपादक"
ए नामनो अध्याय ३ त्रीजो समाप्त.

समाप्त.

शुद्धिपत्र

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
करवा	करवा	१०	१७
गुठाणामां	गुणठाणामां	१७	१५
जब्द	शब्द	१९	१५
खूत्र	सूत्र	२२	२
तेओना	तेओनी	२३	१३
आ लोकाकाश	आ अलोकाकाश	२६	१
होवो	होवुं	३१	१०
करत	करतां	३२	११
षरमाणु	परमाणु	३५	७
मृषाबाद	मृषावाद	३९	१३
जेबा	जेवा	,,	१४
भाबाश्रवना	भावाश्रवना	,,	१७
इयरा	इयरो	४०	१४
प्रदेशवन्ध	प्रदेशबन्ध	४२	१२
हेउ	हेऊ	,,	१८
६४	३५	४३	१३
भाबसंबर	भावसंवर	४४	१०
भाबसंबर	भावसंवर	,,	१३
जीब	जीव	,,	१८

अशुद्ध	शुद्ध	पृष्ठ	पंक्ति
केवळ	केवळ	४५	१८
पृथगभाव	पृथग्भाव	४९	९
षुण्य	पुण्य	”	१७
”	”	”	२०
स्वरुपने	स्वरूपने	५०	१०
रत्ना	रत्नो	५१	७
मामांसा	मीमांसा	५३	१
दृग्दाषाः	दृग्दोषाः	”	१९
दोषा	दोषो	५४	१६
धर्मात्मिक	धर्मात्मक	५५	६
मोक्षमाग	मोक्षमार्ग	५८	११
आनिष्ट	अनिष्ट	५९	७
सर्वसाधुम्यः	सर्वसाधुभ्यः	६०	३
वाह्य	बाह्य	६२	५